पितरों को श्रद्धा दें वे शक्ति देंगे

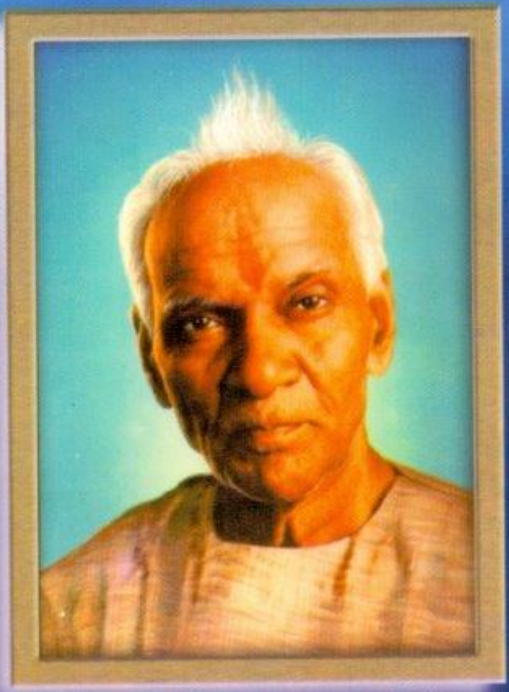

पण्डित श्रीराम शर्मा आचार्य

पितरों को श्रद्धा दें, वे शक्ति देंगे

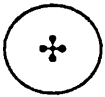

लेखक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ—पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०१३ मूल्य : १८.०० रुपये

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१. उच्च स्वभाव-संस्कार वाली अशरीरी आत्माएँ—पितर	३
२. पितर-संपर्क से लाभ ही लाभ	१६
३. आत्मीयों को पितरों के अनुग्रह—अनुदान	२८
४. प्रगति मार्ग के पथ-प्रदर्शक—पितर	३६
५. लूट-खसोट, अनीति-अन्याय की अवरोधक पितर-सत्ताएँ	६०
६. पितर —अदृश्य सहायक	६६
७. पितरों को श्रद्धा दें, वे शक्ति देंगे	८३

"दह्यमानस्य प्रेतस्य स्वजनैर्यैजलांजलिः।
दीयते प्रीतरूपोऽसौ प्रेतो याति यमालयम्।।"

(गरुड़ पुराण, प्रेत कल्प २४/१२)

अर्थात् दाह किये गये पितरों के स्वजन उसे जो भावनापूर्ण जलांजलि देते हैं, उससे उन्हें आत्मिक शांति मिलती और प्रसन्न होकर उच्चस्थ लोकों को गमन करते हैं।

ISBN
81-89309-15-3

पितरों को श्रद्धा दें, वे शक्ति देंगे

*

उच्च स्वभाव-संस्कार वाली अशरीरी आत्माएँ—पितर

मरने के बाद क्या होता है ? इस प्रश्न के उत्तर में विभिन्न धर्मों में विभिन्न प्रकार की मान्यताएँ हैं। हिंदू धर्मशास्त्रों में भी कितने ही प्रकार से परलोक की स्थिति और वहाँ आत्माओं के निवास का वर्णन किया है। इन मत भिन्नताओं के कारण सामान्य मनुष्य का चित्त भ्रम में पड़ता है कि इन परस्पर विरोधी प्रतिपादनों में क्या सत्य है क्या असत्य ?

इतने पर भी एक तथ्य नितांत सत्य है कि मरने के बाद भी जीवात्मा का अस्तित्व समाप्त नहीं हो जाता, वरन् वह किसी न किसी रूप में बना ही रहता है। मरने के बाद पुनर्जन्म के अनेकों प्रमाण इस आधार पर बने रहते हैं कि कितने ही बच्चे अपने पूर्व जन्म के स्थानों, संबंधियों और घटनाक्रमों का ऐसा परिचय देते हैं, जिन्हें यथार्थता की कसौटी में कसने पर वह विवरण सत्य ही सिद्ध होता है। अपने पूर्व जन्म से बहुत दूर किसी स्थान पर जन्मे बच्चे का पूर्व जन्म के ऐसे विवरण बताने लगना, जो परीक्षा करने पर सही निकलें, इस बात का प्रमाण बताता है कि मरने के बाद पुनः जन्म भी होता है।

मरण और पुनर्जन्म के बीच के समय में जो समय रहता है, उसमें जीवात्मा क्या करता है ? कहाँ रहता है ? आदि प्रश्नों के संबंध में भी विभिन्न प्रकार के उत्तर हैं, पर उनमें भी एक बात सही प्रतीत होती है कि उस अवधि में उसे अशरीरी किंतु अपना मानवी अस्तित्व बनाये हुए रहना पड़ता है। जीवन मुक्त आत्माओं की बात दूसरी है। वे नाटक की तरह जीवन का खेल खेलती हैं और

अभीष्ट उद्देश्य पूरा करने के उपरांत पुनः अपने लोक को लौट जाती हैं। इन्हें वस्तुओं, स्मृतियों, घटनाओं एवं व्यक्तियों का न तो मोह होता है और न उनकी कोई छाप इन पर रहती है, किंतु सामान्य आत्माओं के बारे में यह बात नहीं है। वे अपनी अतृप्त कामनाओं, बिछोह, संवेदनाओं, राग-द्वेष की प्रतिक्रियाओं से उद्विग्न रहती हैं। फलतः मरने से पूर्व वाले जन्मकाल की स्मृति उन पर छाई रहती है और अपनी अतृप्त अभिलाषाओं को पूर्ण करने के लिए ताना-बाना बुनती रहती हैं। पूर्ण शरीर न होने से वे कुछ अधिक तो नहीं कर सकतीं, पर सूक्ष्म शरीर से भी वे जिस-तिस को अपना परिचय देती हैं। इस स्तर की आत्माएँ भूत कहलाती हैं। वे दूसरों को डराती या दबाव देकर अपनी अतृप्त अभिलाषाएँ पूरी करने को सहायता करने के लिए बाधित करती हैं। भूतों के अनुभव प्रायः डरावने और हानिकारक ही होते हैं, पर जो आत्माएँ भिन्न प्रकृति की होती हैं, वे डराने, उपद्रव करने से विरत ही रहती हैं। अमेरिका के राष्ट्रपति भवन में समय-समय पर जिन पितरों के अस्तित्व अनुभव में आते रहते हैं, उनके आधार पर यह मान्यता बन गई है कि वहाँ पिछले कई राष्ट्रपतियों की प्रेतात्माएँ डेरा डाले पड़ी हैं। इनमें अधिक बार अपने अस्तित्व का परिचय देने वाली आत्मा अब्राहम लिंकन की है।

ये आत्माएँ वहाँ रहने वालों को कभी कोई कष्ट नहीं पहुँचातीं। वस्तुतः उपद्रवी आत्माएँ तो दुष्टों की ही होती हैं।

मरण-समय में विक्षुब्ध मनःस्थिति में मरने वाले अक्सर भूत-प्रेत की योनि भुगतते हैं, पर कई बार सद्भाव संपन्न आत्माएँ भी शांति और सुरक्षा के सदुद्देश्य लेकर, अपने जीवन भर संबंधित व्यक्तियों को सहायता देती—परिस्थितियों को सँभालती तथा प्रिय वस्तुओं की सुरक्षा के लिए अपने अस्तित्व का परिचय देती रहती हैं। पितृवत् स्नेह, दुलार और सहयोग देना भर उनका कार्य होता है।

पितर ऐसी उच्च आत्माएँ होती हैं, जो मरण और जन्म के बीच की अवधि को प्रेत बनकर गुजारती हैं और अपने उच्च स्वभाव संस्कार के कारण दूसरों की यथासंभव सहायता करती रहती हैं। इनमें मनुष्यों की अपेक्षा शक्ति अधिक होती है। सूक्ष्म जगत् से संबंध होने के कारण, उनकी जानकारियाँ भी अधिक होती हैं। उनका जिनसे संबंध हो जाता है, उन्हें कई प्रकार की सहायताएँ पहुँचाती हैं। भविष्य ज्ञान होने से वे संबद्ध लोगों को सतर्क भी करती हैं तथा कई प्रकार की कठिनाइयों को दूर करने एवं सफलताओं के लिए सहायता करने का भी प्रयत्न करती हैं।

ऐसी दिव्य प्रेतात्माएँ अर्थात् पितर सदाशयी, सद्भाव संपन्न और सहानुभूतिपूर्ण होती हैं। वे कुमार्गगामिता से असंतुष्ट होतीं तथा सन्मार्ग पर चलने वालों पर प्रसन्न रहती हैं।

पितर वस्तुतः देवताओं से भिन्न किंतु सामान्य मनुष्यों से उच्च श्रेणी की श्रेष्ठ आत्माएँ हैं। वे अशरीरी होती हैं, देहधारी से संपर्क करने की उनकी अपनी सीमाएँ होती हैं। हर किसी से वे संपर्क नहीं कर सकतीं। कोमलता और निर्भीकता, श्रद्धा और विवेक दोनों का जहाँ उचित संतुलन-सामंजस्य हो ऐसी अनुकूल भावभूमि ही पितरों के संपर्क के अनुकूल होती है। सर्व साधारण उनकी छाया से डर सकते हैं, जबकि डराना उनका उद्देश्य नहीं होता। इसलिए वे सर्व साधारण को अपनी उपस्थिति का आभास नहीं देतीं। वे उपयुक्त मनोभूमि एवं व्यक्तित्व देखकर ही अपनी उपस्थिति प्रकट करतीं और सत्परामर्श, सहयोग-सहायता तथा सन्मार्ग-दर्शन करती हैं।

अवांछनीयताओं के निवारण, अनीति के निराकरण की सत्प्रेरणा पैदा करने तथा उस दिशा में आगे बढ़ने वालों की मदद करने का काम भी ये उच्चाशयी 'पितर' आत्माएँ करती हैं। अतः भूत-प्रेतों से विरक्त रहने, उनकी उपेक्षा करने और उनके अवांछित-अनुचित प्रभाव को दूर करने की जहाँ आवश्यकता है, वहीं पितरों के प्रति श्रद्धा-भाव दृढ़ रखने, उन्हें सद्भावना भरी

श्रद्धांजलि देने तथा उनके प्रति अनुकूल भाव रखकर, उनकी सहायता से लाभान्वित होने में पीछे नहीं रहना चाहिए।

पितरों के भी अनेक स्तर होते हैं और उसी के अनुरूप वे सहायता करते हैं।

श्री सी० डब्ल्यू० लेडवीटर ने अपनी पुस्तक 'इन विजिबुल हेल्पर्स' में लिखा है कि सात लोकों में से ऊपरी छह लोकों से संबंधित छह तरह की पितर आत्माएँ होती हैं और प्रत्येक स्तर के दायित्व तथा गतिविधियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। प्रकृति, संस्कार, योग्यता एवं अभिरुचि के अनुरूप ये पितर सहायता एवं मार्गदर्शन का काम करते हैं।

श्री लेडवीटर ने अपनी उपरोक्त पुस्तक में विश्व के विभिन्न समुदायों में प्रचलित पितरों संबंधी धारणाओं के विवरण प्रस्तुत करते हुए यह स्पष्ट किया है, कि पुरानी यूनानी एवं रोमन सभ्यता में ये आस्थाएँ जहाँ धूमिल अस्पष्ट धारणाओं के रूप में विद्यमान हैं, वहीं ईजिप्ट (मिश्र) तथा चीन की सांस्कृतिक आस्थाओं में पितरों से संबंधित विस्तृत कथाओं तथा कर्मकांडों की विद्यमानता है। ईजिप्ट-सभ्यता के धर्म ग्रंथों का सार-संदर्भ 'द बुक ऑफ डेड' नामक ग्रंथ में संग्रहीत है। उसमें पितरों की गतिविधियों, उनके द्वारा दी जाने वाली सहायताओं के सैकड़ों मामले विस्तार से दिए गए हैं, किंतु पितरों की गतिविधियों का निरूपण करने वाले नियम तथा प्रक्रियाएँ स्पष्ट रूप में नहीं दी गई हैं।

श्री लेडवीटर ने अपनी पुस्तक में कहा है कि हिंदुओं में श्राद्ध की जो प्रक्रिया प्रतिष्ठित है तथा उनसे संबंधित जो विवरण हैं, वे सर्वाधिक प्रामाणिक एवं वैज्ञानिक हैं, किंतु अब वे भी मात्र कर्मकांडों के रूप में अवशिष्ट हैं और परंपरागत रीति-रिवाज बनकर रह गए हैं। उनके पीछे सन्निहित तत्त्व ज्ञान को अधिकांश हिंदू भूल चुके हैं। इसलिए न तो वे स्वयं ही उस प्रक्रिया द्वारा पितरों से समुचित और पर्याप्त लाभ प्राप्त कर पाते, नहीं पितरों एवं

स्वर्गीय आत्माओं को ही अपनी श्रद्धा-भावना का उचित लाभ पहुँचा पाते हैं।

श्री लेडवीटर ने स्पष्ट किया है कि इन अशरीरी आत्माओं से संपर्क का मूल आधार संकल्प एवं विचार ही है। जड़ वस्तुओं और निष्प्राण कर्मकांडों के माध्यम से पितरों से आदान-प्रदान का क्रम नहीं चल सकता, क्योंकि वह सारा व्यापार भावनात्मक एवं विचार-परक ही है। कर्मकांड की प्रक्रियाएँ आवश्यक तो हैं, किंतु वे उपकरण हैं, उनका प्रयोग होता है, वे स्वयं इन प्रयोगों के संचालन एवं परिणामों के प्रतिपादन में असमर्थ हैं। बिना ज्ञान के उपकरणों का उचित प्रयोग और सही परिणामों की प्राप्ति असंभव है। अतः आवश्यकता पितरों की सत्ता के सही स्वरूप को समझने और उनसे संपर्क की पात्रता स्वयं में विकसित करने की है ? वैसा हो सके, तो उनसे—देव स्तर का सहयोग प्राप्त किया जाकर, जीवन को अधिक समृद्ध, सार्थक एवं सफल बनाया जा सकता है।

दिव्य प्रेतात्मा से कभी-कभी किन्हीं-किन्हीं का सीधा संबंध उनके पूर्वजन्मों के स्नेह-सद्भाव के आधार पर हो जाता है। कई बार वे उपयुक्त सत्पात्रों को अनायास ही सहज उदारतावश सहायता करने लगते हैं, किंतु ऐसा भी संभव है कि कोई व्यक्ति अपने आपको साधना द्वारा प्रेतात्माओं का कृपा पात्र बना ले और अपने साथ अदृश्य सहायकों का अनुग्रह जोड़कर, अपनी शक्ति को असामान्य बना ले एवं महत्त्वपूर्ण सफलताएँ प्राप्त करने का पथ-प्रशस्त करे।

पितरों के अनेक वर्ग हैं और देवसत्ताओं की ही तरह उनके क्रियाकलापों के क्षेत्र भी भिन्न-भिन्न हैं। प्रत्यक्ष मार्गदर्शन, गूढ़ संकेत, दिव्य प्रेरणाएँ तथा आकस्मिक सहायताएँ उनसे उपलब्ध होती हैं। विपत्ति से त्राण पाने, सन्मार्ग पर अग्रसर होने और मानवीयता के क्षेत्र को विस्तृत करने, सामाजिक प्रगति का पथ प्रशस्त करने में उनके दिव्य-अनुदान दैवी वरदान बनकर सामने आ सकते हैं। सूक्ष्म शक्तियों के रूप में वैसे भी वे क्रियाशील रहते ही हैं और

अनीति-अत्याचार-अन्याय के क्रम को आकस्मिक-अप्रत्याशित रीति से उलट देने की चमत्कारी प्रक्रिया कई बार उनके अनुग्रह से ही संपन्न हुआ करती है। ऐसे श्रेष्ठ पितर सचमुच श्रद्धा-भाजन हैं।

इस संदर्भ में एक नया पक्ष और भी है। वह यह है कि जीव-सत्ता अपनी संकल्प शक्ति का एक स्वतंत्र घेरा बनाकर खड़ा कर देती है और जीव को अन्य जन्म मिलने पर भी वह संकल्प सत्ता उसका कुछ प्राणांश लेकर, अपनी एक स्वतंत्र इकाई बना लेती है और इस प्रकार बनी रहती है, मानो कोई दीर्घजीवी प्रेत ही बनकर खड़ा हो गया हो। अति प्रचंड संकल्प वाली ऐसी कितनी ही आत्माओं का परिचय समय-समय पर मिलता रहता है, लोग इन्हें 'पितर' नाम से देवस्तर की संज्ञा देकर पूजते पाये जाते हैं। वे अपने अस्तित्व का प्रमाण जब-तब इस प्रकार देते रहते हैं कि आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है। इतने पुराने समय में उत्पन्न हुई वे आत्माएँ अभी तक अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं, यह प्रेत विद्या के लोगों के लिए भी अचंभे की बात है, क्योंकि वे भी प्रेत योनि को स्वल्पकालीन मानते हैं। अब उन्हें भी एक नये 'पितर' वर्ग को मान्यता देनी पड़ी है। जो मात्र भूत-प्रेत नहीं होते, वरन् अपनी प्रचंड शक्ति का दीर्घकाल तक परिचय देते रहते हैं।

हजारों वर्ष पूर्व उत्पन्न आत्माएँ अभी तक प्रेतावस्था में ही हों, क्या यह मानना असंगत और असमीचीन हैं ? वे अभी तक निश्चय ही नये जन्म लेकर नयी गतिविधियों में जुट चुकी होंगी। ऐसी स्थिति में यही स्पष्ट होता है कि प्रचंड संकल्प-सत्ता जीवात्मा की प्राण-शक्ति का एक अंश लेकर, एक नई ही शक्तिशाली इकाई बना डालती है। यह प्राणावेग से भरपूर सत्संकल्पात्मक इकाई अपने आवेग की सामर्थ्य के अनुसार ही एक निश्चित समय तक सक्रिय रहती है। वह समय उस प्राण सत्ता के लिए कुछ अधिक न होते हुए भी, हमारे लिए हजारों वर्षों का होने से हमें चमत्कारिक लग सकता है। संकल्प सत्ता के साक्षात् विग्रह स्वरूप ये 'पितर' इकाइयाँ अपनी संरचना में सन्निहित तत्त्वों के अनुरूप ही

गतिविधियाँ करती हैं, अन्य नहीं; अर्थात् ये कुछ सीमित प्रयोजनों में ही मददगार हो सकती हैं। प्रयोजनों के जिन ढाँचों से इन संकल्प-सत्ताओं का अधिक परिचय-लगाव होता है, उनकी पूर्ति में वे विशेष सहायक सिद्ध हो सकती हैं। प्रार्थना-उपासना, ईश्वर-आराधना, सामाजिक कर्तव्य विशेष आदि में आकस्मिक सहायता के रूप में ऐसी ही पितर-सत्ताओं का अनायास अनुग्रह बरसा करता है।

पितरों के ऐसे अनुग्रह-अनुदान संकल्प की प्रखरता, सत्प्रवृत्तियों से अनुराग और विराट् करुणा के परिणाम होते हैं। ये दैवी तत्त्व न केवल पितरों की विशेषताएँ होती हैं, अपितु मनुष्य की भी वास्तविक विभूतियाँ हैं।

☆ सामान्य स्थिति में आकर्षण

अपनत्व का प्रभाव मृत्यु के तत्काल बाद ही देखा जाता है। नेपोलियन बोनापार्ट को अपनी माँ से गहरा प्यार था। जिस समय उसकी मृत्यु हुई, उसकी माँ उससे सैकड़ों मील दूर थी। वह फ्रांस में था, माँ रोम में। उस दिन माँ ने देखा—नेपोलियन सहसा आया है। पैर छूकर कह रहा है कि "माँ ! अभी ही तो मुझे झंझटों से फुरसत मिल पाई।" थोड़ी देर बाद वह अंतर्धान हो गया। बाद में पता चला कि उसका उसी दिन उसी समय निधन हुआ था।

प्रख्यात कवि बायरन ने भी एक ऐसे ही अनुभव का विवरण लिखा है। एक फौजी कप्तान ने रेल यात्रा में रात को सहसा नींद उचटने पर अपने छोटे भाई को पायताने बैठे देखा। वह भाई वेस्टइंडीज में नियुक्त था। कप्तान ने समझा कि कहीं वे स्वप्न तो नहीं देख रहे हैं। उन्होंने अपने जगे होने की आश्वस्ति के लिए हाथ बढ़ाकर भाई को छूना चाहा। उनके हाथ में भी उसका कोट छू गया तो लगा कि वह कोट पानी से तर है। तभी वह भाई अदृश्य हो गया। बाद में तीसरे दिन खबर मिली कि उसकी उसी समय समुद्र में डूब जाने से मृत्यु हुई थी, जब वह वहाँ दिखा था।

परामनोवैज्ञानिकों को अपने अनुसंधानों के दौरान ऐसे अनेक साक्ष्य मिले हैं, जिनसे यह पता चलता है कि मृत व्यक्ति सैकड़ों-हजारों मील दूर स्थित अपने आत्मीयों के पास मृत्यु के तत्काल बाद देखा गया। कई बार व्यक्ति नहीं दिखाई देता, उसकी आवाज सुनाई पड़ती है।

इंग्लैंड के चार्ल्स मैथ्यूज समुद्री जहाज सेवा में कर्मचारी थे। एक रात वे ड्यूटी पर गये। उससे कुछ घंटे बाद उनकी पत्नी और उनकी पड़ौसिन दोनों को चार्ल्स की आवाज सुनाई पड़ी। पड़ौसिन ने सुना कि चार्ल्स उससे कह रहे हैं कि इसका यानी उनकी पत्नी का ध्यान रखना। पत्नी को लगा कि वे उसे पुकार रहे हैं। हुआ यह था कि उस रात जहाज डूब गया था और उसी के साथ श्री मैथ्यूज भी।

इससे सर्वथा भिन्न एक अन्य घटना है। कैलीफोर्निया के एक पुलिस अधिकारी ने एक बार उसके कुछ ही दिनों पूर्व मृत मित्र की छाया देखी। इस छाया ने उससे कहा कि तुम तुरंत मैकडोनाल्ड एवेन्यू पहुँचो। वहाँ स्ट्रीम लाइनर से एक ट्रक टकराकर उलट गया है और उसके ड्राइवर की छाती चकनाचूर हो गई है। पुलिस अधिकारी वहाँ पहुँचा। तब तक वहाँ वैसा कुछ भी घटित न हुआ था। उसे लगा कि मैंने दिवास्वप्न देखा है। वह लौटने को था। तभी वही घटना घटी। स्ट्रीम लाइनर से सामने से आ रहा ट्रक टकराया और ड्राइवर की छाती छलनी हो गई।

इस तरह के प्रमाणों से यह पता चलता है कि मानवीय चेतना जब तक शरीर से ही तादात्म्य अनुभव करती रहती है, तब तक तो वह सीमाबद्ध रहती है, पर शरीर से निकलते ही वह सर्वव्यापी हो जाती है। उसकी संचरण और संप्रेषण क्षमता फिर बंधन मुक्त हो जाती है। वह कहीं भी आ-जा सकती है। यद्यपि अपने संस्कारों के कारण वह सर्वप्रथम अपने आत्मीय के पास पहुँचती है।

कई बार वह आत्मीय के पास न पहुँचकर सर्वप्रथम वहाँ पहुँचती है, जहाँ उसका मृत्यु के तत्काल पूर्व ध्यान जाता है। पूना के एक बड़े वकील को एक बार देर रात में दफ्तर बंद करते समय एक परिचित व्यक्ति दरवाजे पर दिखा। उन्होंने उसके आने का कारण पूछते हुए अंदर आने को कहा। तभी वह अदृश्य हो गया। वे चकरा गये। इसके बाद बिस्तर पर जाकर लेट गये। दो-तीन घंटे बाद उस व्यक्ति के रिश्तेदारों ने दरवाजा खटखटाया। वकील साहब बाहर निकले। तब उन्हें बताया गया कि उस व्यक्ति के घर कुछ लोग गये थे। उन्होंने कहा कि आपको अभी ही वकील साहब ने बुलाया है। नगरपालिका के चुनाव के बारे में कोई खास चर्चा करनी है। सुबह वे जरूरी काम से बंबई चल देंगे। वहाँ वकील साहब के घर और लोग भी हैं, आपसे भी चर्चा करनी है। वह व्यक्ति चल दिया और अभी तक नहीं लौटा। इसी से वे सब ढूँढ़ने आये थे। लोगों ने समझ लिया कि छल किया गया है। प्रातः पता चला कि रात को उन लोगों ने उसकी हत्या कर दी। इससे यह स्पष्ट हुआ कि मृत व्यक्ति को वकील साहब का नाम लगाकर बुलाया गया था, अतः उसके चित्त में यह बात थी और मृत्यु के तत्काल बाद, उसकी आत्मा वहाँ पहुँची थी।

लेखिका शेला आस्ट्रेंडर को एक बार उनकी एक सहेली मृत्यु के तत्काल बाद दिखी। वह सहेली कई मील दूर दूसरे शहर में उसी समय मरी थी। मृत्यु की खबर दूसरे दिन मिली।

इससे चेतना की निस्सीमता का परिचय मिलता है। ऐसा नहीं कि मृत्यु के उपरांत ही मानवीय चेतना इस प्रकार बंधनमुक्त होती है। वरन् यदि संकीर्णता के मानसिक बंधन दूर कर दिये जाएँ, तो जीवित अवस्था में भी चेतना की इन शक्तियों का अनुभव किया जा सकता है और लाभ उठाया जा सकता है।

ये घटनाएँ विरल या अपवाद नहीं हैं। ऐसे लोगों की कमी नहीं, जो दूरस्थ परिजनों की तीव्र संवेदना से याद करने पर, उनके

पास आभास रूप में देखे जाते हैं। ऐसे भी लोग हैं, जो भावाकुल होकर जब किसी प्रियजन का स्मरण करते हैं, तो वह उन्हें अपने सामने उस स्थिति में दिखता है, जिसमें वह उस समय होता है। बाद में पत्र मिलने पर या प्रत्यक्ष भेंट होने पर इस तथ्य की पुष्टि होती है। विशेषकर नारियों को दूराभास और दुरानुभूति प्रायः होती रहती है।

परामनोविज्ञानी हैराल्ड ने ऐसे अनेक वृत्तांतों का संकलन किया है, जिनमें महिलाओं को दूरस्थ भाई या पति की बीमारी या मृत्यु का आभास हुआ और वह सत्य निकला। मनःशास्त्री हेनब्रुक ने भी यही कहा है कि यों ये क्षमताएँ होती मनुष्य मात्र में हैं, किंतु नारियों में सौम्यता, मृदुता और सहृदयता के आधिक्य के कारण यह सामर्थ्य अधिक विकसित पायी जाती है।

बीज रूप में यह सामर्थ्य प्रत्येक व्यक्ति में सन्निहित है। आवश्यकता है, मन को संकीर्ण सीमाओं के बंधनों से मुक्त करने की। ऐसा करने पर पानी में तेल की बूँद की तरह प्रत्येक व्यक्ति की अनुभव-संवेदना का क्षेत्र दूर तक फैल जाता है। सामान्यतः अपने शरीर और मन की दीवालों से टकरा-टकराकर ही व्यष्टि-चेतना की तरंगें लौटती रहती हैं तथा सीमित क्षेत्र में ही हिलोरें लेती रहती हैं; परंतु यदि अनुभूति और संवेदना के स्तरों पर ये दीवालें हटा दी जाएँ, तो अनंत चेतना-समुद्र से उन लहरों का संपर्क हो जाता है।

श्रेष्ठ-संस्कारों वाली पितर-आत्माएँ शरीर और मन की संकीर्णतारूपी दीवालों से मुक्त होती हैं, इसीलिए वे देशकाल की परिधि को लाँघते हुए सत्पात्रों को अपनी सूक्ष्म सत्ता की विशाल सामर्थ्य से लाभान्वित करती रहती हैं।

☆ जीवन के अदृश्य रहस्य

योगवशिष्ठ में एक बहुत महत्त्वपूर्ण आख्यायिका आती है। यह उपाख्यान जीवन के अदृश्य रहस्यों और मृत्यु के उपरांत

जीवन परंपरा पर प्रकाश डालता है, इसलिये समीक्षाकार इसे योगवशिष्ठ की सर्वाधिक उपयोगी आख्यायिका मानते हैं। वर्णन इस प्रकार है—

किसी समय आर्यावर्त में पद्म नाम का एक राजा राज्य करता था। लीला नामक उसकी धर्मशीला पत्नी उसे बहुत प्यार करती थी। जब कभी वह मृत्यु की बात सोचती तो वियोग की कल्पना से घबरा उठती। कोई उपाय न देखकर उसने भगवती की उपासना की और यह वर प्राप्त कर लिया कि यदि उसके पति की पहले मृत्यु हो जाए, तो पति की अंतर्चेतना राजमहल से बाहर न जाए। सरस्वती ने यह भी आशीर्वाद दिया कि तुम जब चाहोगी अपने पति से भेंट भी कर सकोगी। कुछ दिन बीते पद्म का देहांत हो गया। लीला ने पति का शव सुरक्षित रखवाकर भगवती सरस्वती का ध्यान किया। सरस्वती ने उपस्थित होकर कहा—भद्रे ! दुःख न करो, तुम्हारे पति इस समय यहीं हैं, पर वे दूसरी सृष्टि में हैं। उनसे भेंट करने के लिए तुम्हें भी उसी सृष्टि वाले शरीर (मानसिक कल्पना) में प्रवेश करना चाहिए।

लीला ने अपने मन को एकाग्र किया, अपने पति की याद की और उस लोक में प्रवेश किया, जिसमें पद्म की अंतर्चेतना विद्यमान थी। लीला ने जाकर जो कुछ दृश्य देखा, उससे बड़ी आश्चर्यचकित हुई। उस समय सम्राट् पद्म इस लोक के १६ वर्ष के महाराज थे और एक विस्तृत क्षेत्र में शासन कर रहे थे। लीला को अपने ही कमरे में इतना बड़ा साम्राज्य और एक ही क्षण के भीतर १६ वर्ष व्यतीत हो गये देखकर बड़ा विस्मय हुआ। भगवती सरस्वती ने समझाया भद्रे—

सर्गे-सर्गे पृथग्रूपं सन्ति सर्गान्तराण्यपि।
तेष्वप्यन्तः स्थसर्गौघाः कदलीदल पीठवत्।।

योगवशिष्ठ ४।१८।१६-१७

आकाशे परमाण्वन्तर्द्रव्यादेरणुकेऽपि च।
जीवाणुयत्र तत्रेदं जगद्वेत्ति निजं वपुः।।

योगवशिष्ठ ३।४४।३४-३५

अर्थात्—हे लीला ! जिस प्रकार केले के तने के अंदर एक के बाद एक परतें निकलती चली आती हैं, उसी प्रकार प्रत्येक सृष्टि के भीतर नाना प्रकार के सृष्टि-क्रम विद्यमान हैं—इस प्रकार एक के अंदर अनेक सृष्टियों का क्रम चलता है। संसार में व्याप्त चेतना के प्रत्येक परमाणु में जिस प्रकार स्वप्न-लोक विद्यमान है, उसी प्रकार जगत् में अनंत द्रव्य के अनंत परमाणुओं के भीतर अनेक प्रकार के जीव और उनके जगत् विद्यमान हैं।

अपने कथन की पुष्टि में एक जगत् दिखाने के बाद कहा—देवी ! तुम्हारे पति की मृत्यु ७० वर्ष की आयु में हुई है, ऐसा तुम मानती हो, इससे पहले तुम्हारे पति एक ब्राह्मण थे और तुम उनकी पत्नी। ब्राह्मण की कुटिया में उसका मरा हुआ शव अभी भी विद्यमान है यह कहकर भगवती सरस्वती लीला को और भी सूक्ष्म जगत् में ले गई। लीला ने वहाँ अपने पति का मृत शरीर देखा—उनकी उस जीवन की स्मृतियाँ भी याद हो आईं और उससे भी बड़ा आश्चर्य यह हुआ कि जिसे वह ७० वर्ष की आयु समझे हुए थीं, वह और इतने जीवन काल में घटित सारी घटनाएँ उस कल्प के कुल ७ दिनों के बराबर थीं। लीला ने देखा—उस समय मेरा नाम अरुंधती था—एक दिन एक राजा की सवारी निकली, उसे देखते ही मुझे राजसी भोग भोगने की इच्छा हुई। उस वासना के फलस्वरूप ही उसने लीला का शरीर प्राप्त किया और राजा पद्म को प्राप्त हुई। इसी समय भगवती सरस्वती की प्रेरणा से राजा पद्म जो अन्य कल्प में था, उसे फिर से पद्म के रूप में राज्य-भोग की वासना जाग उठी, लीला को उसी समय फिर पूर्ववर्ती भोग की वासना ने प्रेरित किया, फलस्वरूप वह भी अपने

व्यक्त शरीर में आ गई और राजा पद्म भी अपने शव में प्रविष्ट होकर जी उठे। फिर कुछ दिन तक उन्होंने राज्य-भोग भोगे और अंत में मृत्यु को प्राप्त हुए।

इस एक आख्यायिका से आत्मा की अकूत सामर्थ्य, देश काल की सापेक्षता, संकल्प की प्रचंड शक्तिमत्ता और जगत् की अनंतरूपता-रहस्यमयता सभी पर सुंदर प्रकाश पड़ता है। हजारों वर्षों के उपरांत भी पितर-सत्ताओं का सक्रिय रहना देश-काल की सापेक्षता और संकल्प शक्ति की प्रखरता का परिणाम है। उनका सर्वव्यापी हो सकना और विशिष्ट सामर्थ्य-संपन्न होना आत्मसत्ता की अकूत सामर्थ्य पर प्रकाश डालता है तथा इसी जगत् में, हमारे ही इर्द-गिर्द उनकी विद्यमानता जागतिक-संरचना की विलक्षणता को प्रकट करती है। संकल्प-साधना और श्रद्धा-भावना द्वारा इन पितर-सत्ताओं से संपर्क साधा जा सकता और लाभ उठाया जा सकता है।

❐❐

पितर-संपर्क से लाभ ही लाभ

वाशिंगटन के किसी चर्च में श्रीयुत् रेवरेंड आर्थर फोर्ड का भाषण था। मृतात्माओं को बुलाने और उनका जीवित मनुष्यों के साथ संबंध स्थापित करने में फोर्ड की उन दिनों अमेरिका में वैसी ही ख्याति थी, जिस तरह भारतवर्ष में अहमद नगर के श्री बी० डी० ऋषि और उनकी धर्मपत्नी की चर्चा रही है। श्रीमती रूथ मांटगुमरी ने फोर्ड के बारे में अनेक बातें सुनी थीं, वह स्वयं भी अमेरिका की प्रख्यात महिला थीं और जीन डिक्सन के संपर्क में आने के बाद से आत्मा, मृत्यु, परलोक, पुनर्जन्म आदि पर विस्तृत खोज कर रही थीं। एक दिन एक लाइब्रेरी में उन्हें श्री शेरवुड एडी की प्रसिद्ध पुस्तक 'आप मृत्यु के बाद भी जीवित रहेंगे' (यू विल सरवाइव आफ्टर डेथ) पढ़ी। उसमें फोर्ड की उपलब्धियों की विस्तृत चर्चा थी। श्री एडी विश्व के विख्यात लेखक थे। पूर्व में वाइ० एम० सी० ए० के संस्थापक भी वही थे, इसलिये श्रीमती रूथ मांटगुमरी ने निश्चय किया कि जब एडी ने भी फोर्ड की उपलब्धियों को सत्य और प्रामाणिक माना है, तो उनसे मिलकर निःसंदेह अनेक तथ्यों का पता लगाया जा सकता है। तभी से वे इस प्रयत्न में थीं कि कहीं फोर्ड से भेंट की जाए। सौभाग्य ही था कि आज फोर्ड स्वयं किसी आध्यात्मिक भाषण के संबंध में वाशिंगटन पधारे थे। श्रीमती रूथ मांटगुमरी ने अवसर खोना ठीक नहीं समझा। वे फोर्ड से मिलीं और विस्तृत विचार-विमर्श के लिए और समय की माँग की। फोर्ड ने दो दिन बाद आने की स्वीकृति दे दी।

दो दिन बाद श्रीमती रूथ मांटगुमरी फोर्ड से नियत स्थान पर फिर मिलीं और उनसे पूछा—क्या यह निश्चित है कि मृत्यु के बाद जीवन का अंत नहीं हो जाता वरन् आत्माएँ अपनी गतिविधियाँ और क्रिया-कलाप उसी प्रकार जारी रखती हैं, जिस तरह जीवित मनुष्य ?

फोर्ड ने उत्तर दिया—"मृत्यु के पश्चात् भी आत्माएँ दूसरे लोकों में जाकर बराबर आध्यात्मिक उन्नति के प्रयत्न में रहती हैं। जब तक मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती, तब तक उनका यह प्रयत्न बराबर चलता रहता है। आध्यात्मिक उन्नति के लिए यह आत्माएँ दूसरे लोगों, विशेषकर अपने प्रियजनों को भी संदेश पहुँचाना चाहती हैं, पर उन सूक्ष्म संकेतों को सब लोग नहीं पकड़ पाते, इसलिये उनके संदेश निरर्थक जाते रहते हैं, पर कई आत्माएँ इतनी बलवान् होती हैं कि वे अपनी बात किसी माध्यम से व्यक्त और लिख भी सकती हैं।

श्रीमती रूथ इतनी आसानी से वह बातें मान लेने वाली नहीं थीं। प्रत्येक मनुष्य के जीवन में ऐसी जिज्ञासाएँ उठती हैं, किंतु चिंतन के अभाव में, विश्लेषण अथवा प्रमाणों के अभाव में वह रहस्य मुंदे के मुंदे रह जाते हैं। एक बार बालक नचिकेता को भी ऐसी ही प्रबल जिज्ञासा उठी थी, उसने भी यमाचार्य से ऐसा ही प्रश्न किया था—

ये यप्रेते विचिकित्सा मनुष्ये अस्तीत्येके नत्यमस्तीति चान्ये।
एतद्विद्यामनुशिष्ट स्त्वयाहं वराणामेष वरस्तृतीयः।।

—कठ० उप० १-२०,

"आचार्य देव ! मरे हुए मनुष्य के विषय में बड़ा भ्रम है। कुछ लोग कहते हैं, मृत्यु हो जाने पर भी जीव बना रहता है। कुछ कहते हैं, उसका नाश हो जाता है। सो आप मुझे उसका निश्चित निर्णय करके बताइये कि सत्य क्या है ?"

यमाचार्य ने नचिकेता को तब योगाभ्यास कराया और उसके द्वारा उसने यह जाना कि जीव किस प्रकार मृत्यु के उपरांत यमलोक, प्रेतलोक, वृक्ष, वनस्पति आदि योनियों तथा भुवर्लोक आदि में जाता है और वहाँ की परिस्थितियों का वर्तमान की तरह उपयोग करता है।

अपनी बात फोर्ड ने समाप्त की तो श्रीमती रूथ मांटगुमरी ने उनसे पूछा—"क्या आप ऐसी किसी आत्मा को बुलाकर मुझसे परिचय करा सकते हैं, जिसे मैं पहले से जानती होऊँ, जिससे मैं सत्य और असत्य का पता लगा सकूँ ?"

फोर्ड एक सोफे पर आराम से बैठ गये। दोनों आँखें एक काले रूमाल से बाँध लीं। रूथ ने पूछा 'क्या बत्ती बुझा देनी चाहिए ?' पर फोर्ड ने कहा—उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। थोड़ी देर बाद एक आवाज आने लगी, यह आवाज यद्यपि फोर्ड के मुख से ही आ रही थी, पर उनकी आवाज से बिल्कुल भिन्न। उसने बताया कि यह लो श्रीमती रूथ तुम्हारे चाचा तुम से भेंट करना चाहते हैं। इनका नाम फ्रेंड बैनेट है। वह बहुत समय पहले अफ्रीका में पादरी (प्रीचर) थे।

श्रीमती रूथ तुरंत बोलीं—"नहीं, नहीं यह गलत है। मेरे इस नाम के कोई चाचा नहीं थे, न ही इस नाम के किसी व्यक्ति को जानती हूँ।" इसके बाद माध्यम (फोर्ड) ने फिर बोलना आरंभ किया—वह भी तुम्हें नहीं जानते, पर उनका कहना है कि तुम्हारे पति उन्हें खूब अच्छी तरह जानते हैं। तुम्हारे पति का नाम 'बाब' है, तुम उनसे घर जाकर पूछना और हाँ, अब लो यह तुम्हारे पिताजी उपस्थित हैं। वे अपना नाम 'ट्रा' बता रहे हैं। श्रीमती रूथ यह सुनते ही चौंकी—वस्तुतः उनके पिता का यही नाम था।

माध्यम ने आगे बोलना आरंभ किया—श्रीमती रूथ—आपके पिता आपको और आपकी माता जी को प्यार कहते हैं, वे बताते हैं कि जब उनकी मृत्यु हुई थी, तब तुम उनके पास नहीं थीं। वे काफी बीमार थे और उनकी एकाएक मृत्यु हो गई थी। मरकर थोड़ी देर में उन्हें अपने रोग का भी पता नहीं रहा। वे स्वस्थ अनुभव कर रहे हैं, वे कह रहे हैं—"यहाँ किसी प्रकार की बीमारी नहीं है, मनुष्य हमेशा एक-सी अवस्था में रहता है, न वह बूढ़ा होता है, न बालक और न युवक, और हाँ, देखो, तुम्हारी माता जी यहाँ

नहीं हैं, वे तुमसे काफी दूर हैं, अभी कुछ दिन तक आयेंगी भी नहीं, उन्हें मैं देख रहा हूँ, उनकी टाँग में कई दिन से दर्द हो रहा है।"

उक्त दोनों व्यक्तियों के अतिरिक्त कई और जानी, अनजानी आत्माओं का परिचय श्रीमती रूथ से कराया गया। अपनी पुस्तक 'सत्य की खोज में' (इन सर्च ऑफ ट्रूथ) में वे स्वयं लिखती हैं—"कई पहचानी हुई आत्माओं की बातें इतनी सत्य थीं कि मैं आश्चर्यचकित रह गई। मेरे पिताजी ने जो-जो बातें बताईं, सब सच थीं। सचमुच ही जब वे बीमार थे तब मैं अखबार के काम से इजिप्ट गई थी, मुझे इजिप्ट में ही तार द्वारा उनके निधन की सूचना दी गई थी। जब मैं लौटकर आई तब दो दिन बीत चुके थे। पिताजी किसी बीमारी से ही मरे थे, यह भी मुझे अच्छी तरह मालूम है।"

"सायंकाल मैंने एकाएक माताजी को टेलीफोन किया तो उन्होंने बताया कि सचमुच उनके एक पैर में कई दिन से बुरी तरह से कष्ट है और उन्हें लौटने में काफी समय लगेगा। इसी प्रकार बाब ने मुझे बताया कि मेरी मौसी फ्रेंड बैनेट नाम के एक पादरी को ब्याही थी। वे कांगो (अफ्रीका) में ही रहते थे।"

इन दोनों घटनाओं में श्रीमती रूथ ने जहाँ वर्तमान के सत्यों को स्वीकार किया है, वहाँ यह भी लिखा है कि यदि मृतात्माओं द्वारा बताई हुई भूत व वर्तमान की बातें सच होती हैं तो वे मृत्यु के अनंतर अपने अस्तित्व के बारे में भी जो कुछ कहते हैं, उसे सत्य मानने से इनकार करना दुराग्रह ही होगा। उसे न मानकर मानव-समाज अपना अहित ही करता है, क्योंकि उससे एक अत्यंत आवश्यक और उपयोगी वास्तविकता पर पर्दा पड़ जाता है।"

"माध्यम" के द्वारा मेरे पिता ने कहा था—मैं एक ऐसे रहस्य का उद्घाटन करता हूँ जो विश्व की सबसे बड़ी आवश्यकता है, वह यह कि हम एक ऐसे संसार में रह रहे हैं, जिसमें स्थूल की तरह सब कुछ दृश्य है, सब कुछ अनुभव गम्य है, जहाँ बराबर उन्नति होती रहती है। हम शून्य (वैक्यूम) में नहीं रह रहे, पर यहाँ

सबको मनोरंजन से रहना पड़ता है, यहाँ बेकार बैठकर कोई प्रसन्न नहीं रह सकता, जितना शरीर से काम कर सकता था, उससे अधिक काम में अब भी कर सकता हूँ। तुम जानती होगी, मुझे गाने का शौक था, मैं अभी भी संगीत का अभ्यास करता हूँ।"

"यह बातें सुनने वाले को अटपटी अवश्य लगती हैं, किंतु देर तक अध्ययन और खोज करने के पश्चात् मुझे इनकी सत्यता में अविश्वास नहीं रह जाता।" इस सत्य को स्वयं श्रीमती रूथ मांटगुमरी ने स्वीकार किया है और उसके साथ अमेरिका की उस जबर्दस्त घटना को जोड़ा है, जिसके बारे में वहाँ बहुत दिन तक व्यापक हलचल मची रही।

यह घटना भी फोर्ड ने माध्यम के द्वारा बताई—जिस समय श्रीमती रूथ को मृतात्माओं से परिचय कराया जा रहा था, माध्यम (फोर्ड; जो मृतात्माओं को बुलाकर, उनसे संकेत प्राप्त करके रूथ को बताता था) ने बताया—आपसे कोई जज बात करना चाहते हैं, वह लैपटे शहर में आपके घर के समीप ही रहते थे, एक दिन अचानक कहीं गायब हो गये। बाद में डूब जाने से उनकी मृत्यु हुई थी, उनका सड़ा हुआ ढाँचा अब भी वहाँ पड़ा देखा जा सकता है।

श्रीमती रूथ ने वहाँ तो यही कहा कि मुझे ऐसे किसी पड़ौसी का पता नहीं है, किंतु घर आकर उन्होंने लैफ्टे कूरियर जनरल के संपादक से टेलीफोन पर पूछा तो उसने बताया—"हाँ, हाँ आपके मकान के पास पार्किन्सन नामक एक सज्जन अवश्य रहते थे। वे 'यूनाइटेड कोर्ट ऑफ अपील्स' में जज थे। वे एक बार एकाएक गायब हो गए। सात राज्यों के सम्मिलित प्रयत्नों के बाद भी उनका कहीं पता न चला। लेक शोर होटल के समीप मिशीगन झील के किनारे उनका एक हैट और छाता अवश्य मिला था, पर उनके डूबकर मर जाने का कोई प्रमाण न मिलने के कारण उनके स्थान पर कोई परमानेंट जज की नियुक्ति नहीं की गई थी। उनका वेतन उनके बैंक खाते में जमा किया जाता रहा है।"

सबसे आश्चर्यजनक बात यह थी कि थोड़े दिन बाद ही उनका सड़ा हुआ ढाँचा पानी में तैरता हुआ पाया गया। इन घटनाओं से इस बात की पुष्टि होती है कि जीवात्मा नहीं, शरीर मरता-जीता है और मृत्यु के बाद भी जीवन का विकास-क्रम बंद नहीं होता। गीता में भगवान् कृष्ण ने भी यही बात कही है—

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नाय भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।

—गीता २, अध्याय ।२०

अर्थात् यह आत्मा न तो कभी जन्म लेता है और न मरता है, वह तो अजन्मा, नित्य, शाश्वत और पुरातन है, मरना-जीना तो शरीर का धर्म है, शरीर का नाश हो जाने पर भी आत्मा का नाश नहीं होता।

योग वशिष्ठ में लिखा है—

न जायते म्रियते चेतनः पुरुषः क्वचित्।
स्वप्न संभ्रमवद् भ्रांतमेतत्पश्यति केवलम्।।

—३।५५।६७,

पुरुषश्चेतना मात्रं स कदा क्लेव नश्यति।
चेतन व्यतिरिक्तत्वे वदान्यक्ति पुभान्भभेत्।।

—३।५४।६८

आत्मा न कभी जन्म लेता है और न मरता है। भ्रमवश स्वप्न की-सी स्थिति का अनुभव किया करता है। पुरुष तो चेतन मात्र है, नष्ट नहीं होता। लाखों शरीर का नाश हो जाने पर भी चेतन आत्मा अक्षय स्थित रहता है।

व्यक्ति के सत्संस्कार—संपन्न होने पर यही अक्षय आत्मा उसकी मरणोपरांत अवधि में 'पितर' रूप में क्रियाशील रहता है तथा अपनी आत्मोन्नति के लिए प्रयासरत रहने के साथ ही इस पृथ्वी के प्रति रागात्मक संपृक्ति रखने के कारण यहाँ भी स्वजनों या

सत्पात्रों की आत्मोन्नति में मदद करने को सदैव प्रस्तुत रहता है। उन पितरों से संपर्क करने पर व्यक्ति को लाभ ही लाभ होता है, हानि कुछ नहीं होती।

योग द्वारा सूक्ष्म शरीर के अदृश्य ज्ञान को स्थूल रूप में लाने की विद्या किसी समय भारतवर्ष में बहुत अधिक प्रचलित थी। लोग पितरों से जीवित मनुष्यों की तरह संबंध स्थापित कर लेते थे, अब भी उस विद्या के जानकार छिट-पुट योगी हैं अवश्य, पर उनका दृष्टिकोण भी नितांत स्वार्थपूर्ण और व्यावसायिक है। संसार के कल्याण अथवा एक नये विज्ञान की खोज का भाव उसमें नहीं पाया जाता, यह विद्या धीरे-धीरे पश्चिम को जा रही है। पिछले १०० वर्षों में वहाँ इस संबंध में विस्तृत खोजें हुई हैं। बड़े-बड़े पदार्थवेत्ताओं ने यह माना है कि मृत्यु के बाद चेतना दूसरे कोषों में बना रहता है, प्रोफेसर क्रुक्स, ब्रंटन और सर ओलिवर लॉज ने इन विषयों पर बहुत अधिक लिखा है।

दिव्य प्रेतात्माओं से लगभग देव स्तर का सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। उनकी सामर्थ्य स्वल्प होते हुए भी सूक्ष्म जगत् से संबंधित होने के कारण कितनी ही बातों में इतनी बढ़ी-चढ़ी होती हैं, कि संबद्ध मनुष्य उस सहयोग से आशाजनक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। प्रेतात्मा की सहायता से अनेक लाभ मिलते रहे हैं।

वैज्ञानिकों में मूर्धन्य सर विलियम क्रुक्स और सर ओलिवर लॉज की मृतात्माओं से संपर्क स्थापित करने की खोजों को संसार भर में प्रमाणिक माना जाता है। वे लोग इस स्तर के नहीं थे, जिन पर गप्पबाजी का आरोप लगाया जा सके।

सर ओलीवर लॉज ब्रिटेन के माने हुए वैज्ञानिक रहे थे, उन्हें कई विश्वविद्यालयों की मूर्धन्य डिग्रियाँ और स्वर्ण पदक प्राप्त थे। वे ब्रिटिश एसोसियेशन के प्रधान थे। ईथर तत्त्व का पदार्थ के साथ क्या संबंध है, इस विषय पर उनकी खोज अत्यंत प्रामाणिक मानी जाती है। उन्होंने विज्ञान के लिए आत्मा के अस्तित्व को भी एक आवश्यक अन्वेषण पक्ष माना था और स्वयं आगे बढ़कर इस

संबंध में महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। इसके लिए उन्होंने 'साइकिक रिसर्च सोसाइटी' की स्थापना की और उसे बहुमूल्य योगदान देकर, अभीष्ट प्रयोजन के लिए अधिक काम कर सकने योग्य बनाया। सर ओलिवर लॉज अपनी शोध दृष्टि का समुचित प्रयोग करके न केवल आत्मा का अस्तित्व और मरणोत्तर जीवन की यथार्थता स्वीकार करने की स्थिति में पहुँचे थे, वरन् उन्होंने प्रेतात्माओं से साक्षात्कार करने और उनके साथ संपर्क बनाने में भी सफलता प्राप्त की थी।

उनका पुत्र रेमंड प्रथम विश्व युद्ध में मारा गया था। मृतात्मा के साथ संपर्क बनाने और उसके माध्यम से अनेकों ऐसी अविज्ञात जानकारियाँ प्राप्त करने में सफल हुए, जो परखने पर पूर्णतया सत्य सिद्ध हुईं। उनके एक समकालीन वैज्ञानिक सर विलियम क्रुक्स ने अपने प्रेतात्माओं संबंधी निष्कर्षों का विवरण 'रिसर्च इन द फेनोमिनस ऑफ स्प्रिचुअलिज्म' में प्रकाशित कराया है। उसमें सर ओलिवर लॉज के शोध-कार्यों का भी उल्लेख हुआ है।

सर ओलीवर लॉज ने स्वर्गीय आत्माओं के अस्तित्व एवं क्रियाकलाप संबंधी जानकारी के लिए एक सुव्यवस्थित शोध संस्थान स्थापित किया था। उसमें ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के सर अर्नेस्ट वनेट जैसे मूर्धन्य मनीषी सम्मिलित थे। इन शोध-कार्यों का प्रसारण ब्रिटेन के रेडियो प्रसारण—बी० बी० सी० पर होता रहा है। सर लॉज ने ब्रिटेन के अति प्रामाणिक लोगों के भूतों का अस्तित्व सिद्ध करने वाले अनुभवों का संग्रह एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित कराया था।

स्वीडन के शरीरशास्त्र, अर्थशास्त्र, खगोल विद्या, गणित में अठारहवीं सदी के माने हुए विद्वान् एमेनुअल स्वेडनवर्ग ने परलोक विद्या पर गहरी खोज की थी और मृतात्माओं से संबंध स्थापित करने में सफलता प्राप्त की थी। एक बार हॉलैंड के मृत राजदूत की विधवा पत्नी अपने पति द्वारा कहीं रखे गये दस्तावेजों के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिए, उनके पास उपस्थित हुई।

स्वेडनवर्ग ने मृतात्मा से संबंध स्थापित करके, वह गुप्त स्थान बता दिया जहाँ वे महत्त्वपूर्ण दस्तावेज रखे हुए थे।

मनोविज्ञान शास्त्र के जन्मदाता फेडरिक मायर्स ने अंतःचेतना का एक विशेष स्तर स्वीकार किया है—'सुप्रालिमिनल सेल्फ' की व्याख्या करते हुए उन्होंने लिखा है कि इस स्तर का विकास मनुष्य की अतींद्रिय अनुभूतियाँ करा सकती हैं। जो सर्वविदित नहीं हैं, ऐसे रहस्यों को जान सकने की क्षमता मस्तिष्क के उस परिचेतना में बीज रूप से मौजूद रहती है, जिसे सब-लिमिनल सेल्फ कहते हैं। उन्होंने अपने निज के अनुभवों की चर्चा की है और मनुष्य चेतना के भीतर एक ऐसा तत्त्व है, जिसके आधार पर दूरवर्ती छिपी हुई तथा भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं की जानकारी मिल सकती है। अप्रकट रहस्यों के प्रकटीकरण और अशरीरी आत्माओं के साथ संबंध जोड़ने की संभावना इस चेतना स्तर में होने की बात उन्होंने स्वीकार की है।

राजनेता, लब्ध-प्रतिष्ठ लेखक और भारती भवन मुंबई के संचालक स्वर्गीय श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने अपनी प्रेतात्माओं संबंधी अभिरुचि तथा विश्वसनीयता की चर्चा करते हुए लिखा है—

मार्च १९३० में डांडी यात्रा के पूर्व हमने काश्मीर जाने का निश्चय किया था। हमने आत्मा से पूछा कि हमें कब जाना चाहिए ? आत्मा ने उत्तर दिया—'नहीं, तुम जेल जा रहे हो' और सचमुच डांडी यात्रा शुरू हो गई, मैंने सत्याग्रह किया तथा गर्मियाँ आर्थर रोड जेल में बितायीं।

संसार के कितने ही अन्य संभ्रांत व्यक्तियों ने दिवंगत आत्माओं के साथ संपर्क स्थापित करने में सफलता पाई है।

'रिव्यू ऑफ रिव्यूज' के संपादक डब्लू० टी० स्टैड जैसे विशिष्ट व्यक्तियों ने आत्मा से संपर्क की कला को एक आदरपूर्ण विषय बना दिया है। 'शरलाक होम्स' के रचयिता सर आर्थर कॉनन डायल भी मृतात्माओं से संपर्क किया करते थे। कहा जाता है कि

सन् १८६३ में पादरी जे० एच० बरोस ने सेंट पाल, बुद्ध, सुकरात, जेरी टेलर, जॉन मिल्टन, रोगर विलियम्स, लैसिंग, अब्राहम लिंकन, टैनिसन, ह्विटियर और फिलिप्स ब्रुक्स से संपर्क किया था।

इलाहाबाद से निकलने वाले अंग्रेजी दैनिक लीडर के संपादक स्व० श्री सी० वाई० चिंतामणि प्रायः एक आत्मा के प्रभाव में आ जाया करते थे। वे स्वयं में उस आत्मा की उपस्थिति अनुभव करते थे।

'एडवेंचर्स ऑफ स्पिरिचुअलिज्म' के लेखक मुंबई वासी श्री पोस्टन जी० डी० महालक्ष्मीवाला ने ३ सितंबर, १६२५ को एक प्रसिद्ध परलोक विद्याविद् अमरीकी डॉ० पी० बल्स की आत्मा का, एक कोरा कागज रखकर आवाहन किया। पितर ने उस कागज पर हस्ताक्षर किए। वे हस्ताक्षर डॉ० पी० बल्स के पिछले हस्ताक्षरों से मिलाए गए। वे हू-बहू वैसे ही थे।

श्री प्रो० बी० डी० ऋषि इंदौर में जज थे। धर्मपत्नी सुभद्रा देवी की मृत्यु ने उनमें मृत-पत्नी से वार्ता की इच्छा जगाई तथा वे इसी खोज में लग गये। वे सफल हुए व पूरा जीवन परलोक विद्या के लिए ही समर्पित कर दिया। उन्होंने कई पितरों को बुलाकर अत्यंत महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के समक्ष विभिन्न प्रमाणों सहित वार्तालाप किया-कराया था। वे ऐसे तथ्य उद्घोषित करतीं, जो नितांत निजी होते।

प्रसिद्ध पत्रकार एवं शिक्षाशास्त्री पं० श्री नारायण चतुर्वेदी के पिता स्वर्गीय पं० द्वारिका प्रसाद चतुर्वेदी भी पितर सत्ताओं को बुलाने के प्रयोग करते थे। एक मेज पर वे पंचपात्र व एक चमची रख देते। मृतात्मा के आते ही पंचपात्र स्वयं बज उठता। फिर प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए जाते।

महाकवि विलियम ब्लैक के बारे में कहा जाता है कि माइकेल एंजिलो-मोजेन-क्लीओपेट्रा की स्वर्गीय आत्माओं के साथ रात्रि के एकांत में वार्तालाप करते थे। वे आत्माएँ आकर उनके साथ महत्त्वपूर्ण विषयों पर वार्तालाप करती थीं।

यदि संपर्क उचित माध्यम से किया जा सके तो मरणोपरांत आत्माएँ उचित परामर्श, सहयोग, सान्निध्य देने में समर्थ रहती हैं। इसमें संदेह नहीं है।

अमेरिका के प्रथम राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन अक्सर आत्मवादी कुमारी नैटीकोल बर्न को आदरपूर्वक व्हाइटहाउस में आमंत्रित किया करते थे और उससे रणनीति तथा दूसरे महत्त्वपूर्ण तथ्यों पर परामर्श किया करते थे। उस लड़की पर कई पितरों की छायाएँ छाई रहती थीं और वे इस स्तर की थीं कि किन्हीं रहस्यपूर्ण तथ्यों का उद्‌घाटन कर सकें। लिंकन ने कई बार अपनी कार्य-पद्धति उनकी सहायता से बनाई थी और कई ऐसी रहस्यपूर्ण बातों का पता लगाया, जिन्हें खोज सकना जासूसी जाल द्वारा भी संभव न हो सका।

पितरों से संपर्क कर उनसे दूरस्थ क्षेत्रों में वर्तमान में घट रही घटनाएँ तथा सूक्ष्म जगत् के अंतराल में पक रही भविष्यत्—संभावनाएँ जानी जा सकती हैं। इसी प्रकार श्रेयस्कर तथा कल्याणकारी सन्मार्ग की जानकारी प्राप्त कर आत्मोत्थान की दिशा में बढ़ा जा सकता है। भौतिक लाभ भी पितरों की अनुग्रह पूर्ण सूचनाओं से प्राप्त किए जाते रहे हैं तथा ऐसी सूचनाएँ देते समय वे अपनी संस्कारजन्य श्रेष्ठता के कारण औचित्य-अनौचित्य पर भी प्रकाश डालने में कभी पीछे नहीं रहते। इस प्रकार इन श्रेष्ठ भावनाओं, विचारों एवं इच्छाओं वाले श्रद्धास्पद पितरों से संपर्क हर प्रकार लाभकारी ही सिद्ध होते हैं।

साधारण मृतात्माएँ वे होती हैं, जो अपने स्वजनों, आत्मीयों, बंधु-बांधवों से ही संबंध को उत्सुक रहतीं हैं। उनकी दुनिया सीमित ही रहती है। अपनेपन का उनका दायरा घर-परिवार तक ही सीमित रहता है। उनकी कामनाएँ भी सीमित और साधारण होती हैं। परिजन-प्रियजन से मृत्यु के उपरांत कुछ दिनों तक मिलते रहना, उन्हें छिटपुट जानकारियाँ दे देना, प्रणय-निवेदन कर देना, साथ-साथ थोड़ी देर रह लेना या मृत्यु के पूर्व की अपनी किसी

वासना-आकांक्षा की इस संपर्क द्वारा पूर्ति कर-करा लेना ही उनका उद्देश्य होता है। प्रियतम पति या प्रियतमा—पत्नी से संपर्क करने वाली अथवा अपने प्रशंसकों को उत्तर लिखवाती रहने वाली मृतात्माएँ इसी भूत-अवस्था में रह रही होती हैं। कुछ समय बाद इनकी आसक्ति का केंद्र कहीं अन्यत्र हो जाता है। 'माध्यम' के माध्यम से इनका संपर्क हल्का-फुल्का संतोष ही दे पाता है और आत्मकल्याण में किंचित् मात्र सहायक नहीं होता, भूतों के संपर्क ऐसे ही व्यर्थ होते हैं।

पितर आत्माएँ इनसे भिन्न हैं। इनका उद्देश्य आत्मकल्याण के लिए पथ-प्रदर्शन करना और सत्परामर्श देना ही होता है। उनकी निज की कोई वासना नहीं होती। कोई क्षुद्र प्रयोजन पितरों के इस संपर्क के पीछे नहीं होता। वे तो सन्मार्ग दिखलाने के लिए ही संपर्क करते हैं।

आत्म चेतना के विस्तार की दृष्टि से ये पितर-आत्माएँ भी दो प्रकार की होती हैं। एक तो वे जो मृत्यु—पूर्व की अवधि के कुल-वंश के सगे-संबंधियों को ही आत्मीय मानतीं, उनको ही सत्परामर्श देतीं, पथ-प्रदर्शन करतीं और लाभ पहुँचाती हैं। दूसरी वे उदार-पितर आत्माएँ हैं, जिनकी आत्मीयता की परिधि अति विस्तृत हो चुकी होती है। जो सत्प्रवृत्तियों-सद्भावनाओं के आधार पर सगापन मानती हैं। पूर्व के किसी परिचय-संबंध की उन्हें रंच मात्र अपेक्षा नहीं होती। जो सन्मार्गगामी हैं, सद्भाव संपन्न हैं, वही आत्मीय। ऐसी पितर-आत्माएँ प्रत्येक उत्कृष्ट व्यक्ति को सहायता पहुँचाने को तत्पर एवं प्रस्तुत रहती हैं। वे किसी भी सत्पात्र से संपर्क करने में समान रूप से संतोष-आनंद का अनुभव करती हैं।

❑❑

आत्मीयों को पितरों के अनुग्रह-अनुदान

सन् १९६७ की दिसंबर की ठंडी रात्रि थी। श्रीमती एकले 'हडसन' नदी के किनारे स्थित अपने मकान की बालकनी में खड़ी अपने पति को रवाना होते देख रही थीं। यह वही विक्टोरिया कालीन मकान था, जो वर्षों से खाली पड़ा था। झूठ हो या सच, प्रायः हर व्यक्ति यह कहता था इस भवन में भूत निवास करते हैं। एक दिन खेत जाते समय श्री एकले की नजर इस पर पड़ी। वे इन बातों पर विश्वास नहीं करते थे, वे प्रतिदिन यह विचार करते कि इतना भव्य मकान वीरान पड़ा है। केवल इसलिये कि लोग इसे भूत-बाड़ा समझ बैठे हैं। रोज इसे खरीदने का वे विचार करते और अंततः इसे एक दिन उन्होंने कार्यरूप में परिणत कर दिया। मकान उन्होंने स्वयं खरीद लिया।

उसी रात्रि श्रीमती एकले को ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई उनके बहुत समीप खड़ा है। इतना समीप कि उसकी साँसें उनकी गर्दन को स्पर्श कर रही हैं। भूतों से संबंधित सभी कल्पनाएँ उनके मस्तिष्क में घूम गईं व भयभीत होकर, वे वहाँ से जैसे ही भागने को पीछे मुड़ीं, उन्होंने देखा कि एक छाया उनके मार्ग में खड़ी है। इस छाया से क्षीण ध्वनि फूटी—"तुम डरकर भागो नहीं। अभी तक जितने भी व्यक्ति इस घर में आये हैं—भयभीत होते रहे हैं, जबकि हमारा उद्देश्य मनुष्यों की सहायता करना, उनसे सहानुभूति अर्जित करना है।" इन शब्दों से श्रीमती ऐकले को साहस मिला। वे आश्वस्त हुई और बोलीं—"आप लोग कौन हैं ? कितने व्यक्ति हैं ? और इस रूप में क्यों आपको भटकना पड़ रहा है ?" छाया ने जवाब दिया कि हम लोग तीन व्यक्ति हैं, जो तुम्हारे वंश के ही हैं। तुम्हारा यहाँ आना एक संयोग मात्र नहीं है। हमारे द्वारा एकले को दी गयी विचार रूप में प्रेरणा ही तुम्हें यहाँ लायी है। मरणोत्तर जीवन में एक योनि ऐसी होती है, जिसमें उच्च अशरीरी आत्माएँ सहायक आत्माओं के रूप में सूक्ष्म जगत् में भ्रमण करती रहती हैं,

व सभी की सहायता करती हैं। जब इस मकान को भुतहा ठहरा दिया गया तो हमने उचित समझा कि तुम्हें यहाँ बुलाया जाए। श्रीमती एकले काफी देर तक अपने वंशज पितर से बात करती रहीं। बात का विषय मोड़ तथाकथित प्रेत ने हडसन नदी के दृश्य की सुंदरता की चर्चा आरंभ कर दी व श्रीमती एकले उसे इतना दत्तचित्त हो देखने लगीं कि उन्हें स्मरण ही नहीं रहा कि कब वह छाया वहाँ से चली गई ?

यह बहुचर्चित घटना जो उन दिनों अखबार की सुर्खियों का विषय बनी, रीडर्स डायजेस्ट के मई १८७७ अंक में भी छपी है व इसमें इस प्रथम साक्षात्कार के बाद इन सहयोगी आत्माओं से मिले कई अनुदानों की चर्चा है। ऐसी घटनाएँ आज के मनुष्य को, जो भौतिकवाद में डूबा पड़ा है, मरणोत्तर जीवन की सचाई से अवगत कराती हैं।

एक उच्च श्रेणी देवता की होती है व एक निचली श्रेणी प्रेत की। इन दोनों के मध्य पितर योनि होती है ऐसा हमारे शास्त्रकारों का मत है। इनके प्रति श्रद्धा का अर्थ इनसे सहयोग एवं शुभ-कामनाएँ प्राप्त करना है। इनसे भयभीत होना नहीं। डरावनी या घिनौनी प्रकृति के भूत-प्रेत कम ही होते हैं। अतृप्त आकांक्षाओं व वासनाओं वाले भूत-प्रेत ही मनुष्यों को परेशान करते हैं। इन अशरीरी आत्माओं का अस्तित्व सिद्ध करने वाली घटनाएँ एक तथ्य निश्चित ही स्पष्ट करती हैं, कि वैज्ञानिकों का यह कथन कि मरने के बाद जीवन समाप्त हो जाता है, गलत है। इन पितरों का अस्तित्व सिद्ध करने के विषय में भारतीय दर्शन अतीत काल से अपनी मान्यताएँ प्रतिपादित करता आया है। पर जब इस तरह की प्रामाणिक घटनाएँ घटती हैं, तब स्वाभाविक तौर पर भौतिकवादियों को मरणोत्तर जीवन, आस्तिकता-धार्मिकता के पग में सद्गति देना पड़ती है।

एकले परिवार ने पड़ौसियों की आशा के विपरीत उस घर में ही बने रहने का निर्णय लिया। आये दिन घर के किसी न किसी

सदस्य की भेंट इन अदृश्य आत्माओं से होती रही व अपनी सहायक मनोवृत्ति का परिचय देती रही।

कई बार ये पितर मजाक के मूड में होते। हाथ से मुँह में जा रहा नाश्ता कोई अज्ञात छाया मुँह में झपट लेती एवं सब एक साथ हँस पड़ते। ऐसा प्रतीत होता है कि इनको सिंथिया से विशेष लगाव था जो 'एकले' की बड़ी पुत्री थी। यदि वह पढ़ाई हेतु सबेरे नियत समय पर न उठती तो उसका बिस्तर जोरों से हिलने लगता, जब तक वह उठकर बैठ न जाती, बिस्तर हिलता रहता। छुट्टियों में सिंथिया ने सोते समय प्रार्थना की 'कृपया मुझे देर तक सोते रहने देना।' आत्माओं ने बात मान ली व काफी देर तक थकी-हारी सिंथिया सोती रही। सिंथिया ने अक्सर एक राजकालीन वेशभूषा में घूम रही महिला की छाया को अपने कमरे में देखा। सन् १९७६ में सिंथिया के विवाह के बाद श्रीमती एकले ने कमरे में प्रवेश करते ही आवाज सुनी "हमारी ओर से भी सिंथिया के लिए कुछ भेंट है, जो आशीर्वाद स्वरूप उसे दे देना।" उन्होंने एक आल्मारी खोली व उसमें एक सुंदर नक्काशी किया, चाँदी के चम्मचों का जोड़ा पाया। सिंथिया को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई तो औरों की भेंटों के साथ ही उन्हें अपने पितरों से सोने की अँगूठी भी मिली।

यह घटना इन पितरों द्वारा एकले परिवार को आत्मीयता-वश दी गई सहायता एवं सहानुभूति दर्शाती है, वे उस परिवार द्वारा इनके प्रति दी जाने वाली श्रद्धा का महत्त्व प्रतिपादित करती है।

मृत व्यक्ति द्वारा आत्मीयों से संपर्क की प्रतिपादक एक अन्य घटना "मृत्यु के पश्चात् मनुष्य जिंदा रहता है" (मैंस सरवाइवल आफ्टर डेथ) में एस० पी० आर० की रिपोर्टस् से उद्धृत करते हुए पादरी—सी० एच० ट्वीडेल ने दी है।

आइओवा नगर में रहने वाले एक किसान श्री मिकाइल कौनले की मृत्यु हो गई। मिकाइल बड़ा संपन्न व्यक्ति था, पर वह हमेशा गंदे कपड़े पहनता था। उसकी मृत्यु भी गंदे कपड़ों में ही हुई। एक कमीज, जो महीनों से नहीं धोई गई थी पहने उसकी

संदिग्ध अवस्था में मृत्यु हो गई। इस मृत्यु की जाँच करने वाले अफसर ने शव को देखकर कहा—इसके पुराने कपड़े तो यहीं मुर्दाघर में फेंक दिये जाएँ और इसे साफ कपड़ा पहनाकर मेरे घर भेज दिया जाए। किसान के बेटे ने ऐसा ही किया। सफेद कपड़े पहनाकर लाश अफसर के घर भेज दी गई। लड़का जैसे ही अपने घर लौटा कि अपनी बहन बेहोश पाई। काफी देर बाद होश में आने पर उसने बताया मैंने अभी-अभी पिताजी को साफ कपड़ों में देखा। वैसे कपड़े वे कभी नहीं पहनते थे। वे मुझसे कह रहे थे—मेरी पुरानी कमीज मुर्दाघर में पड़ी है, उसमें कुछ बिल और रुपये हैं।

लड़की के इस बयान को घर और पड़ौस वालों ने भी तब तो बकवास कहा, पर जब लड़के ने बताया कि हाँ ! सचमुच ही उनके पुराने कपड़े उतरवाकर मुर्दाघर में फिकवा दिये गये हैं, तो लोगों की आतुरता भी बढ़ी। लोग मुर्दाघर गये। कमीज उठाकर देखी गई उसमें भीतर बड़ी सावधानी से एक थैली सी हुई थी, उसमें बिल भी थे और रुपये भी। इस घटना से सभी आश्चर्यचकित रह गये और वहाँ उपस्थित सभी लोगों ने माना कि मृत्यु के पश्चात् भी चेतना अपनी बौद्धिक क्षमता के साथ जीवित रहती है तथा आत्मीयों से संपर्क कर उन्हें आवश्यक सूचनाएँ देकर लाभ पहुँचाती है।

ये पितर-आत्माएँ अपने स्वजन आत्मीयों से अनुराग—आकर्षण तो रखती हैं, किंतु हीनता-दुष्टता से मुक्त होने के कारण उनका यह अनुराग भोग-वासनापरक नहीं, अपितु सहायतापरक होता है।

भोग के लिए उत्सुक वासना की आग से उत्तप्त मृतात्माएँ तो स्वजनों को अपनी छिछोरी चेष्टाओं से आतंकित करती और उनकी चेतना पर दबाव डालकर, उन्हें अनुचित क्रियाकलापों के लिए बाध्य करती देखी जाती हैं। ये दुरात्माएँ कुत्सित दुरभिलाषाएँ भी पालती हैं कि हमारा अमुक प्रियजन रुग्ण होकर मर जाए और

अकालमृत्यु तथा प्रेत-आवेश के कारण हमारी ही बिरादरी में खिंच आए तो हम गर्हित वासना-भोग की कल्पनाएँ साथ-साथ कर सकें।

सत्संस्कार-संपन्न पितर-आत्माएँ भी आत्मीयों से संपर्क की इच्छुक रहती हैं, किंतु उनका उद्देश्य भूतों से सर्वथा विपरीत रहता है। वे सत्परामर्श एवं विवेकपूर्ण मार्गदर्शन देकर, सच्चे सात्त्विक अनुराग का परिचय देती हैं।

☆ अनसुनी चेतावनी

स्काटलैंड का राजा जेम्स चतुर्थ इंग्लैंड पर प्रायः आक्रमण कर बैठता था। अंतिम आक्रमण के बाद उसे एक पूर्वज की अदृश्य आत्मा आभास रूप में दिखाई पड़ी। उसने स्पष्ट चेतावनी देते हुए कहा—"भविष्य में तुमने कोई और आक्रमण किया तो तुम्हें जान से हाथ धोना पड़ेगा। राजा ने उस चेतावनी की उपेक्षा कर दी और अगला आक्रमण किया। परिणाम वही हुआ, युद्ध-स्थल में ही उसकी मृत्यु हो गई।"

ऐसी ही एक घटना फ्रांस के सम्राट् हेनरी चतुर्थ की है।

सम्राट् हेनरी चतुर्थ एक दिन सायंकाल अपने राजोद्यान में भ्रमण कर रहे थे। घूमते-घूमते थोड़ा आगे बढ़ जाने से लौटने में देर हो गई। सूर्य डूब गया। झुरमुट हो गई।

एक प्रकाश जैसी छाया-आकृति उन्हें सामने और अपने आस-पास चक्कर-सी काटती दिखाई दी। हेनरी पहले तो कुछ झिझके, पर शीघ्र ही सँभल गए और पूछा—कौन हो ? छाया बोली—मैं तुम्हारा शुभेच्छु और आत्मीय हूँ और यह बताने आया हूँ कि तुम्हारी हत्या का षड्यंत्र रचा जा रहा है। शीघ्र ही मार दिए जाओगे। कर सकते हो तो बचाव का अभी कोई प्रबंध कर लो।

उत्सुकतावश हेनरी ने पूछा—आप प्रेत क्यों हुए ? यह बात शरीर न होने पर कैसे जान गये ? क्या आप मेरे षड्यंत्रकारियों को मार नहीं सकते ?

इस पर प्रेत ने उत्तर दिया—शरीर की मृत्यु हो जाने पर भी इच्छा-शरीर उत्तेजित बना रहता है, यही हमारी स्थिति है। अधिकांश प्रेत अपने लोगों का भला ही करने की सोचते हैं, हम आपके षड्यंत्रकारियों को जानते हैं, जो आपकी हत्या करना चाहते हैं। उन्हीं की चेतावनी देने हम आये हैं। यह कहकर वह छाया वहाँ से अदृश्य हो गई।

हेनरी चतुर्थ ने अपने सभी दरबारियों को यह घटना सुनाई तो सब लोग हँस पड़े और बोले—श्रीमान् जी ! आपने दिवास्वप्न देखा होगा। आपकी हत्या भला कौन करेगा, किंतु सारे फ्रांस और संसार ने सुना कि उसके कुछ ही दिन बाद उनकी सचमुच हत्या कर दी गई।

☆ भयानक आकृति की प्रेतात्मा ने भला किया

इससे भिन्न एक घटना यह है—इंग्लैंड की डफरिन और अवा रियासतों के सामंत लार्ड डफरिन कभी भारतवर्ष के वायसराय रह चुके थे, कनाडा के गवर्नर जनरल और रोम के राजदूत रहने का भी उन्हें सौभाग्य मिला था। सन् १८६१ में वे पेरिस के राजदूत नियुक्त हुए। एक दिन उन्हें एक मित्र ने आयरलैंड में एक दावत दी। रात के बारह बजे तक भोज चला। इसके बाद उनके लिए अत्यंत सजे हुए एकांत कमरे में विश्राम की व्यवस्था कर दी गई, लार्ड डफरिन अभी लेटे ही थे कि सारा कमरा एकाएक तीव्र प्रकाश से भर गया। यों उस दिन पूर्णमासी थी। बाहर चंद्रमा पूरे वेग से छिटक रहा था, तो भी कमरे के सभी दरवाजों और खिड़कियों पर पर्दा पड़ा था, भीतर प्रकाश जाने की कोई संभावना नहीं थी। बल्ब बुझे हुए थे। लार्ड डफरिन को आशंका हुई, वे उठे, सब तरफ देखा, कहीं कुछ गड़बड़ तो नहीं। फिर लेटे ही थे कि वही पहले जैसा तीव्र प्रकाश अनुभव हुआ। उन्होंने अच्छी तरह परखा कि वे जाग रहे हैं और होश में हैं। फिर खड़े होकर खिड़की से झाँककर देखा तो कुछ ही गज की दूरी पर एक आकृति अपने कंधे पर एक

शव ढोने के कठघरे जैसा बोझ लिये दिखाई दी। वह कराह-सी रही थी। लगता था बोझ भारी है, उसे जाने में कष्ट हो रहा है।

उन दिनों प्रयोगशालाओं के लिए शवों की बड़ी आवश्यकता रहती थी। वैज्ञानिक मुँह-माँगे दाम देते थे, इसलिए फ्रांस में मुर्दों की चोरी की एक आम हवा चल पड़ी थी। डफरिन ने सोचा कोई मुर्दा चोर है, तो साहस करके वे आगे बढ़े और पास पहुँचते ही ललकारकर पूछा—"कौन हो ?" आकृति ने उनकी ओर थोड़ा घूर कर देखा तो वे स्तब्ध रह गये। इतना भयानक चेहरा लार्ड डफरिन ने पहले कभी न देखा था तो भी उन्होंने साहस किया और आक्रमण के लिए जैसे ही थोड़ा आगे बढ़े कि वह आकृति वहीं अंतर्धान हो गई। न कोई व्यक्ति था, न कोई बोझ। टार्च के सहारे दूर तक देखा पृथ्वी पर पैरों के कहीं चिह्न भी नहीं थे। लार्ड डफरिन तब कुछ डरे। यह एक अविस्मरणीय घटना थी। वे कमरे में लौटे और उसी समय जो कुछ जैसा देखा था, वैसे ही डायरी में नोट कर लिया। फिर वे रात भर सो नहीं सके। कुछ दिन में बात आई गई हो गई।

कुछ वर्ष बीते लार्ड डफरिन तब पेरिस में राजदूत ही थे, एक दिन सभी राजनैतिक व्यक्तियों कों भोज दिया गया। पेरिस के ग्रांड होटल में उसका प्रबंध किया। समय पर सब लोग होटल के समीप इकट्ठे हुए। ऊपर होटल तक ले जाने के लिए 'लिफ्ट' तैयार थी। वरिष्ठ होने के नाते सब लार्ड डफरिन की ही प्रतीक्षा में थे।

नियत समय पर जैसे ही वे उस लिफ्ट के पास पहुँचे, वर्षों पूर्व देखी हुई वही भयानक आकृति वहाँ उपस्थित पाई। उस दिन की सारी घटना एक सेकेंड में मस्तिष्क में नाच गई। वे पीछे हट गए, अपने सेक्रेटरी से भोज में सम्मिलित होने से इनकार करते हुए वे लौट पड़े और सीधे होटल के मैनेजर के पास जाकर पूछा—लिफ्ट पर किसे नियुक्त किया गया है ? जब तक वह कोई उत्तर दे, एक धड़ाम की आवाज आई, सब लोग लिफ्ट की ओर दौड़े। देखा, लिफ्ट बीच में ही कटकर टूट गई है, सारे सवार

अतिथि गिरकर बुरी तरह दुर्घटना ग्रस्त हो गये हैं। डफरिन के अतिरिक्त सभी लोग मर चुके थे। यह समाचार फ्रांस के सभी समाचार-पत्रों ने छापा और यह स्वीकार किया कि भूत की सत्ता सचमुच कुछ न कुछ है—उसका विज्ञान कुछ भी होता होगा। लुई आन्स्पैचर द्वारा यह घटना "रीडर्स डाइजेक्ट" पत्रिका में भी छपी थी।

उस भयानक आकृति के प्रेतात्मा का डफरिन को आयरलैंड में शव ढोने वाला बक्सा ले जाते जैसी अशुभ स्थिति में दिखने पर भी, उनका अनिष्ट न करना इस अनुमान को बढ़ाता है कि दूसरों के लिए वह कितना भी अशुभ रहा हो, किंतु डफरिन के प्रति उसके मन में आत्मीयता का कोई कोना सुरक्षित था।

पेरिस के ग्रांड होटल में वह छाया-रूप में ही लिफ्टमैन के निकट विद्यमान रहा होगा और लोगों को वह भयानक आकृति नहीं दिखा। नियमित ड्यूटी वाला लिफ्टमैन ही दिखा। मात्र लार्ड डफरिन को वह भयानक पुरुष दिखा। इसका अर्थ है कि वह अपनी भयानक गतिविधियों में प्रकृतिवश जुटा रहकर भी डफरिन को मूक चेतावनी देना चाहता था। कई प्रेततत्त्व विद्या विशारदों के अनुसार वह कोई लार्ड घराने का ही क्रूरकर्मी पूर्वज रहा होगा, जिसे मृत्यु के बाद भी ऐसे ही कठोर दायित्व सौंपे गये। श्री लेडबीटर ने भी "इनविजिबल हेल्पर्स" में यही लिखा है, जिस आत्मा के जो कार्य अधिक अनुकूल होते हैं, उन्हें परलोक में वैसे ही दायित्वों के निर्वाह का प्रशिक्षण देकर फिर वैसी ही भूमिका सौंप दी जाती है। अपनी सीमा में बँधे हुए भी उस क्रूरकर्मी पितर ने डफरिन को तो चेतावनी देकर उनका हित ही साधा। डफरिन ने उस मूक चेतावनी या गुप्त संकेतपूर्ण आभास को समझ लिया और उसकी उपेक्षा नहीं की, इससे वे लाभान्वित हुए। यों, उस आकृति की भयानकता भी इतनी अधिक थी कि डफरिन का सहम जाना अनिवार्य ही था।

☆ ममता भरा मार्गदर्शन

श्री लेडबीटर ने अपनी पुस्तक "इनविजिबल हेल्पर्स" में लंदन के पादरी डॉ० जॉन मेसन नील का एक संस्मरण बताया कि एक महिला अपने दो बच्चे छोड़कर मर गई। कुछ दिनों बाद उसका पति बच्चों के साथ अपने एक मित्र के घर घूमने गया। दोनों दोस्त गपशप में मशगूल हो गये। बच्चे खेलने लगे।

खेलते-खेलते बच्चे उस मकान के एक उपेक्षित कोने की सीढ़ियों पर जा पहुँचे। वे सीढ़ियाँ तहखाने को जाती थीं। बच्चे नीचे उतर रहे थे, तभी उन्हें उनकी माँ आती दिखी। माँ ने उनसे कहा कि 'वहाँ नहीं जाओ। चलो, ऊपर चलो।' माँ की बात सुनकर वे बच्चे लौटकर ऊपर आए। तब तक उन दोनों मित्रों का ध्यान इस बात की ओर जा चुका था। बच्चों के पिता के मित्र घबड़ा उठे कि मित्र के बच्चे कहीं तहखाने की तरफ तो नहीं गए। वे लोग उधर लपके तो बच्चे सीढ़ियों पर मिले। तहखाने में एक पुराना कुँआ था। सीढ़ियाँ उसी तक जाती थीं। बच्चे उनमें उतरते चले जाते तो कुँए में जा गिर सकते थे और तब प्राण गँवा बैठते। इसलिए मित्र घबड़ाते हुए दौड़ से पड़े। बच्चों ने बताया कि "अभी-अभी माँ मिली थीं। उसी ने ऊपर आने को कहा था। फिर जाने कहाँ चल दीं ?"

ये सदाशयी आत्माओं द्वारा अपने आत्मीयों के मार्गदर्शन करने उनके ऊपर अपनी आत्मीयतापूर्ण छाया बनाए रखने के उदाहरण हैं। ऐसी हजारों प्रामाणिक घटनाएँ देखीं तथा लिपिबद्ध की जा चुकी हैं, जो मरणोपरांत जीवन का तथा उस अवधि में भी उदार आत्माओं द्वारा आत्मीयों के संरक्षण-पथ प्रदर्शन का विवरण प्रस्तुत करती हैं।

नैपोलियन बोनापार्ट जिन दिनों सेंट हेलेना द्वीप में था, उसे भी एक पितर-सत्ता ने उसकी मृत्यु की सूचना दी थी, जिसे उसके साथियों ने अमान्य कर दिया था, पर अंत में नैपोलियन की मृत्यु ठीक उसी दिन उन्हीं परिस्थितियों में हुई, जो प्रेत ने बताई थी। संभवतः उस पितर का बोनापार्ट के प्रति विशेष लगाव था।

अनेक सिद्ध पुरुष अपने दूरस्थ शिष्यों को अपनी सूक्ष्मसत्ता से प्रत्यक्ष मदद पहुँचाते हैं। प्रसिद्ध आर्य समाजी संत स्व० श्री आनंद स्वामी के पुत्र लेखक—पत्रकार श्री रणजीत ने अपने संस्मरण—लेख में यह बताया था कि किस प्रकार उनके पिता ने उन दिनों, जबकि वे जीवित थे और भारत में थे तथा श्री रणजीत विदेश में प्रवास पर थे, एक बार भयानव, खड्ड में गिर पड़ने से चेतावनी देकर उन्हें रोका था। अन्य कई अवसरों पर भी उनकी मदद व मार्गदर्शन का कार्य उनके पिता ने किया था, जबकि वे उस समय उनसे सैकड़ों मील दूर हुआ करते थे।

विकसित आत्म-सामर्थ्य के ये लाभ सिद्ध पुरुषों द्वारा आत्मीयजनों को अनायास ही पहुँचाए जाते रहते हैं। यही स्थिति पितरों की है। ऐसी शरीरी-अशरीरी उच्च आत्माओं के प्रति श्रद्धा-भाव रखना उचित भी है और आवश्यक भी।

अधिक उच्चकोटि की पितर आत्माएँ तो जीवित महामानवों-महायोगियों की तरह ही उदात्त होती हैं। उनके लिए अपने-पराए जैसा कोई भेदभाव होता ही नहीं। जहाँ भी आवश्यकता एवं पात्रता दिखी, वहीं उनके अनुग्रह-अनुदान बरसने लगते हैं। जरूरत उनके अनुकूल बनने, उत्कृष्ट जीवन और प्रगाढ़ श्रद्धा-भाव अपनाने की होती है।

मृत्यु के बाद भी जीवन का अस्तित्व बना रहता है। परिपक्व मृत्यु होने पर चेतना कुछ समय के लिए विश्राम में चली जाती है। जिस प्रकार दिन भर का थका-मांदा व्यक्ति प्रगाढ़ निद्रा में सो लेता है तो उसे फिर से नयी ताजगी मिल जाती है, उसी प्रकार मृत्यु के बाद जीव की अवस्था के अनुरूप वह दो माह से दो वर्ष तक विश्राम ले लेने के पश्चात् नया जन्म धारण कर लेता है। पर कई बार नींद पूरी तरह नहीं आती। अफीमची और शराबी लोगों की नींद उखड़ी-उखड़ी होती है, ऐसे लोगों को मृत्यु के समय भी पूरी नींद नहीं आती और वे नया जन्म लेने पर भी थके-थके से अस्त-व्यस्त होते हैं। जिन्हें नींद पूरी

आ जाती है और जिनके मन शुद्ध और पवित्र होते हैं, वे अन्य जन्मों में बाल्यावस्था से ही पूर्व जन्मों की स्मृतियाँ दोहराने लगते हैं।

जिनकी इंद्रिय वासनाएँ प्रबल होती हैं या जिनकी मृत्यु हत्या या आत्महत्या जैसी होती है, वे एक प्रकार से निचोड़े गये शहद के छत्ते की भाँति होते हैं। शहद का छत्ता काटकर रख दिया जाए, तो उसका शहद अपने आप टपक आता है, वह नितांत शुद्ध होता है, पर निचोड़े जाने पर उसमें मोम आदि का अंश भी आ जाता है। उसी प्रकार ऐसी मृत्युओं में स्थूल अवयव भी बने रहते हैं, ऐसी ही आत्माएँ प्रेत, पिशाच, भूत, बैताल, किन्नर और यक्ष होते हैं। यह मरघट में अपने शवों तथा जिनके प्रति उनकी स्वाभाविक आसक्ति होती है, उनके पास घूमते आते-जाते भी रहते हैं, पर जिनके शरीर में आग्नेय-अणु अधिक होते हैं, उनके पास इस तरह की गंदी आत्माएँ नहीं जा पाती हैं और जब नींद टूटती है तो वे अपनी आसक्ति के अनुरूप निम्नगामी योनियों में चले जाते हैं।

विश्राम के बाद देव आत्माएँ या जिनकी गति ऊर्ध्वमुखी—अच्छे कामों में रही होती है, जिनके शरीरों का आणविक विकास प्रकाशपूर्ण हो गया होता है—वे दिव्य लोकों को चली जाती हैं और जब तक वहाँ रहने की इच्छा होती है, तब तक रहती हैं। पीछे इच्छानुसार अच्छे घरों में जन्म लेकर लोक-सेवा, पुण्य-परमार्थ और नेतृत्व आदि उत्तरदायित्व सँभालती हैं, पर जिनका मन अशुभ संस्कारों वाला रहा होता है—वे अधोगामी लोकों में रहकर, निम्नगामी योनियों में चली जाती हैं। इस प्रकार संसार में गुण-कर्म का यह प्रवाह, प्रकृति की जटिलता के समान स्वयं ही जटिल रूप में चलता रहता है।

पितर आत्माएँ वे हैं, जिनकी ऊर्ध्वमुखी गति होती हैं। वे कई बार विश्राम की अवधि में कुछ लंबे समय तक भी रही आती हैं। उस अवधि में वे स्वयं तो प्रकाशपूर्ण वातावरण में रहती ही हैं, दूसरे स्वजनों या जिनके प्रति उनके मन में आकर्षण होता है, उनको भी समय-समय पर प्रकाशपूर्ण मार्गदर्शन एवं अनुग्रह-अनुदान देती रहती हैं।

❑❑

प्रगति मार्ग के पथ-प्रदर्शक—पितर

उदात्त आत्माएँ पितर रूप में समस्त सत्पात्रों की सहायता के लिए सदैव प्रस्तुत रहती हैं। उनकी आत्मीयता की परिधि अति विस्तृत होती है। ये पितर सत्ताएँ पात्रता देखती हैं, परिचय की पृष्ठभूमि नहीं, क्योंकि सत्पात्र का परिचय उन्हें तो मिल ही जाता है और दूसरे को अपना परिचय देने की उनकी कोई निजी आकांक्षा नहीं होती। वे तो कल्याण-पथ में नियोजित कर देना ही अपना कर्तव्य मानती हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी को एक पितर-सत्ता ने ही श्री हनुमान और भगवान् राम के दिव्य-दर्शनों की विधि सुनाई थी और उन्हें एक अनाथ भावनाशील बालक से एक भक्त, महाकवि और संत बन जाने में विशेष भूमिका निभाई थी।

थियोसॉफिकल सोसाइटी की जन्मदात्री मैडम ब्लैवेटस्की को चार वर्ष की आयु से ही पितर आत्माओं का सहयोग-सान्निध्य प्राप्त होने लगा। वे अचानक आवेश में आकर ऐसी तथ्यपूर्ण बातें कहतीं, जिन्हें कह सकना किन्हीं विशेषज्ञों के लिए ही संभव था। परिवार के लोग पहले तो उन्हें विक्षिप्त समझने लगे, पर जब उनके साथ देवात्माओं के प्रत्यक्ष संपर्क के प्रमाण देखने लगे तो उनकी विशेषता स्वीकार करनी पड़ी।

एक बार एक प्रेतात्मा ने उसके शरीर के कपड़े ही मजाक में बिस्तर के साथ सी दिये। दूसरे लोगों ने जब वह सिलाई उधेड़ी तभी वे उठ सकीं। एक बार कर्नल हैनरी आल्काट उनसे मिलने आए तो वे सिलाई की मशीन से तौलिया सी रही थीं और कुर्सी पर पैर पटक रही थीं। आल्काट ने पैर पीटने का कारण पूछा तो उन्होंने कहा—एक छोटा प्रेतात्मा बार-बार मेरे कपड़े खींचता है और कहता कि मुझे भी कुछ काम दे दो। कर्नल ने उसी मजाक में उत्तर दिया कि उसे कपड़े सीने का काम क्यों नहीं दे देतीं ? ब्लैवेटस्की ने कपड़े समेटकर अलमारी में रख दिये और उनसे

बातें करने लगीं। बात समाप्त होने पर जब अलमारी खोली गई तो सभी बिना सिले कपड़े सिये हुए तैयार रखे थे।

मैडम ब्लैवेटस्की के कथनानुसार उनकी सहकारी मंडली में सात प्रेत थे, जो समय-समय पर उन्हें उपयोगी परामर्श और मुक्त-हस्त सहायता करते थे। कर्नल आल्काट अमेरिका में अपने समय के अत्यंत सम्मानित नागरिक और प्रसिद्ध वकील थे, उन्होंने मैडम से प्रभावित होकर उनके अध्यात्म कार्य में सदा भरपूर सहयोग दिया।

ब्लैवेटस्की एक बार अपने संबंधियों से मिलने के लिए रूस गईं। वहाँ उसके भाई के कान में भी उनकी दिव्य शक्ति की चर्चा पहुँची। उसने इतना ही कहा कि, मैं मात्र बहिन होने के कारण उनकी बातों पर विश्वास नहीं कर सकता। मैडम ने अपने भाई को एक हल्की-सी मेज उठाकर लाने के लिए कहा– वह ले आया। अब उन्होंने फिर कहा—इसे जहाँ से लाये हो वहीं रख आओ। भाई ने भरपूर जोर लगाया, पर वह इतनी भारी हो गई कि किसी प्रकार न उठ सकी। इस पर घर के अन्य लोग आ गये और वे सब मिलकर उठाने लगे—इतने पर भी वह उठी नहीं। जब सब लोग थक कर हार गये तो मैडम ने मुस्कराकर उसे यथावत् कर दिया और मेज फिर पहले की तरह हल्की हो गई। उसे उठाकर आसानी से जहाँ का तहाँ रख दिया गया।

अशरीरी आत्माओं का अस्तित्व और उनके द्वारा मनुष्य को सहयोग यह एक तथ्य है। डरावनी या घिनौनी प्रकृति के भूत-प्रेत कम ही होते हैं। साधारणतया उच्च आत्माएँ मनुष्यों की सहायता ही करती हैं और अपनी उच्च प्रवृत्ति के कारण दूसरों को आगे बढ़ाने तथा खतरों से बचाने के लिए पूर्व संकेत भी करती हैं। जिस प्रकार उदार मनुष्य अकारण दूसरों की सेवा, सहायता करने के लिए तैयार रहते हैं, वैसे ही सूक्ष्म शरीरधारी आत्माएँ लोगों को उपयोगी ज्ञान देने अथवा आत्मा का अस्तित्व शरीर न रहने पर भी बना

रहता है, यह विश्वास दिलाने के लिए कुछ व्यावहारिक सहयोग देती रहती हैं।

महान् संत सुकरात के बारे में बताया जाता है कि प्रारंभिक जीवन में उन्हें धर्म-कर्म एवं अदृश्य जीवन पर कतई विश्वास नहीं था। एक दिन उन्हें एक प्रेत मिला। उसने अतींद्रिय दर्शन की क्षमता उनमें विकसित करने हेतु भगवत् भजन का परामर्श दिया। शीघ्र ही सुकरात की यह क्षमता विकसित हो गई। प्रेत उन्हें आजीवन विशिष्ट मामलों में जानकारी व परामर्श देता रहा। इससे सुकरात सहस्त्रों व्यक्तियों का कल्याण करते। उन्होंने बताया तो यह तथ्य अपने साथियों को भी—पर साथी-सहयोगी प्रेत को देख नहीं सकते थे, अतः वे सुकरात के भविष्य-कथन आदि को उन्हीं की चमत्कारिक शक्ति मानने लगे।

प्लेटो, जेनोफेन, प्लुटार्क आदि विद्वानों ने सुकरात के जीवन की प्रामाणिक घटनाओं पर प्रकाश डाला है। उन सभी ने स्वीकार किया है कि 'सुकरात ने अनेकों बार यह कहा—'मेरे भीतर एक रहस्यमय देवता 'डेमन' निवास करता है और वह समय पर मुझे पूर्व सूचनाएँ दिया करता है।' इस तथ्य की यथार्थता के अनेक प्रमाण उद्धरण भी उपरोक्त लेखकों ने प्रस्तुत किये हैं।

प्लुटार्क ने अपनी पुस्तक "दी जेनियो सोक्रिटिस" में एक घटना दी है—एक बार सुकरात अपने कई मित्रों के साथ एक रास्ते जा रहे थे। सहसा वे रुक गये और कहा इस रास्ते हमें नहीं चलना चाहिए—खतरा है। कइयों ने उसकी बात मान ली और वह रास्ता छोड़ दिया, पर कई इस साफ-सुथरे रास्ते को छोड़ने के लिए तैयार न हुए। वे सुकरात की सनक को बेकार सिद्ध करना चाहते थे। वे कुछ ही दूर गये होंगे कि जंगली सुअरों का एक झुंड कहीं से आ धमका और उनमें से कइयों को बुरी तरह घायल कर दिया।

प्लेटो ने अपनी पुस्तक "थीवीज" में एक प्रसंग दिया है—एक दिन एक तिमार्कस नामक युवक सुकरात के पास आया, कुछ

खाया पिया। जब चलने लगा तो सुकरात ने उसे रोका और कहा अभी तुम जाना मत, तुम्हारे ऊपर खतरा मँडरा रहा है। तीन बार उसने जाने की चेष्टा की पर तीनों बार सुकरात ने उसे पकड़कर बल- पूर्वक रोक लिया। पीछे वह नहीं ही माना और हाथ छुड़ाकर चला गया। दूसरे ही दिन उसने एक खून कर डाला और फाँसी पर चढ़ाया गया। ऐसी ही अन्य कितनी ही घटनाएँ हैं, जिनमें सुकरात को उसके सहचर देवता 'डेमन' द्वारा पूर्वाभास दिये जाने तथा सहायता करने के प्रमाण मिलते हैं।

सुकरात पर जब मुकदमा चला और प्राणदंड दिया जाने लगा, उस समय उसके पास ऐसे प्रमाण और साधन थे, जिनसे प्राणदंड से छुटकारा संभव था। ऐथेन्स की जेल से उसके मित्र एवं शिष्य भाग ले जाने हेतु भी पूर्ण तैयारी कर चुके थे, किंतु सुकरात ने न्यायालय में स्वीकार किया—अभी-अभी मेरा देवता, 'डेमन' मेरे कानों में कहकर गया है कि मृत्यु दंड मिलेगा, उससे डरने की कोई बात नहीं है, ऐसी मृत्यु मनुष्य के लिए श्रेयस्कर होती है।

इंग्लैंड के राजघराने में प्रेतात्माओं की अनुभूतियों का वर्णन चार्ल्स डिकेन्स ने अपने उपन्यास 'मिस्ट्री ऑफ एडविनहुड' में किया है। पुस्तक के बीस अध्याय लिखकर ही वे स्वर्गीय हो गये थे। मृत्यु के दो वर्ष बाद उन्होंने थॉमस जेम्स को लिखने का माध्यम बनाने के लिए तैयार किया और उनकी कलम से अपना शेष कार्य स्वयं पूरा कराया।

श्रीमती जान कूपर का 'टेल्का' उपन्यास विशेष रूप से और अन्य सामान्य रूप से प्रख्यात हुए हैं। श्रीमती कूपर का कथन है— इस लेखन में उन्हें किसी दिव्य आत्मा का मार्ग दर्शन और सहयोग मिलता रहा है।

अमेरिका की श्रीमती रूथ मांटगुमरी का कथन है कि उनका 'ए वर्ल्ड बियोंड' नामक ग्रंथ स्वर्गीय आर्थर फोर्ड की आत्मा ने बोल-बोल कर लिखाया है।

इंग्लैंड के सुप्रसिद्ध लेखक तोएल कोवर्ड ने अपनी प्रख्यात रचना 'दि ब्लाइद् स्प्रिट' के संबंध में लिखा है कि यह लेखन उसने किसी अदृश्य साथी के सहयोग से लिखा है।

'जॉन ऑफ आर्क' ने अपने आत्म परिचय में यह जानकारी दी थी कि उन्हें विशिष्ट काम करने की प्रेरणा और शक्ति किसी अदृश्य आत्मा से मिलती है।

ब्रिटिश कस्बे गलोसेस्ट-शायर में रहने वाली पैट्रिशिया मूलतः कनाडा की रहने वाली लेखिका थीं। उनका कहना था कि कई वर्ष पूर्व वे महान् नाटककार जार्ज बर्नार्ड शा से आयरलैंड की किर्लानी झील के तट पर एक होटल के एक कमरे में मिली थीं और दोनों में प्यार हो गया। बर्नार्ड शा अपनी मृत्यु के बाद भी प्रतिदिन रात में मेरे कमरे में आकर मुझसे मिलते रहे। मृत्यु उपरांत पहली रात जब शां की आत्मा आई, तो दोनों ने एक वर्णमाला तैयार कर ली। उसी के आधार पर दोनों में बातें होती थी।

पेट्रीशिया जार्ज बर्नार्ड शा को 'बर्नी' कहती थीं। उनके अनुसार बर्नी ने उन्हें एक अँगूठी विवाह की रस्म पर दी थी। यह 'विवाह' बर्नार्ड शा की मृत्यु के बाद हुआ। वह अँगूठी पेट्रीशिया की हथेली पर हरदम चमचमाती रहती थी। पेट्रीशिया के एक बच्चा भी हुआ था, जिसे वह शा का यानी अपने बर्नी का बताती थी। हालाँकि जार्ज बर्नार्ड शा की मृत्यु के १० वर्ष बाद यह बच्चा हुआ था।

पेट्रीशिया के अनुसार वह उन दिनों जो कुछ भी साहित्य लिखती रही, वह बर्नी की ही प्रेरणा से। उसके कमरे में जार्ज बर्नार्ड शा की एक बड़ी तस्वीर थी। मकान में इस युग में भी कभी बिजली नहीं जली। बारह कमरों वाले दो मंजिले मकान में सिर्फ दो-तीन कमरों में पुराने लैंप टिमटिमाते थे। शेष भाग घने अंधकार में लिपटे रहते थे। एकांत में वह अक्सर अदृश्य 'बर्नी' से बातें करने लगती थीं।

☆ संगीत-शिक्षक आत्मीय पितर

लंदन की एक महिला रोजमेरी ब्राउन परलोकवेत्ताओं के लिए पिछली चार दशाब्दियों से आकर्षण का केंद्र रही हैं। वे संगीत में पारंगत थीं। बहुत शर्मीले स्वभाव की थीं, भीड़-भाड़ से, सार्वजनिक आयोजनों से दूर रहती थीं और अपनी एकांत साधना को शब्द ब्रह्म की साधना के रूप में करती थीं।

आश्चर्य यह है कि उनका कोई मनुष्य संगीत शिक्षक कभी नहीं रहा। उन्हें इस शिक्षा में अदृश्य मनुष्य सहायता देते रहे और उन्हीं के सहारे वे दिन-दिन प्रगति करती चली थीं। उनकी संगीत-साधना तब शुरू हुई, जब वे सात साल की थीं। उन्होंने एक सफेद बालों वाले कोट वाला आत्मा देखा, जो आकाश से ही उतरा और उसी में गायब हो गया। उसने कहा, मैं संगीतज्ञ हूँ, तुझे संगीतकार बनाऊँगा। कई वर्ष बाद उसने विख्यात पियानो वादक स्वर्गीय फ्रांजलिस्ट का चित्र देखा, वह बिल्कुल वही था, जो उसने आकाश में से उतरते और उसे आश्वासन देते हुए देखा था।

बचपन में वह कुछ थोड़ा-सा ही संगीत सीख सकीं। पीछे वह विवाह के फेर में पड़ गईं और जल्दी ही विधवा भी हो गईं। उन दिनों उसकी गरीबी और परेशानी भी बहुत थीं, फिर वही मृतात्मा आई और कहा—संगीत-साधना का यही उपयुक्त अवसर है। उसने कबाड़ी के यहाँ से एक टूटा पियानो खरीदा और बिना किसी शिक्षक के संगीत-साधना आरंभ कर दी। रोजमेरी ब्राउन का कहना है कि उसका अशरीरी अध्यापक अन्य संगीत विज्ञानियों को साथ लेकर उसे सिखाने आता था। उनके मृतात्मा शिक्षकों में वाख, बीठो, फेंन, शोर्ये, देवुसी, लिश्ट, शूवर्ट जैसे महान् संगीतकार सम्मिलित थे, जो उसे ध्वनियाँ और तर्ज ही नहीं सिखाते थे बल्कि उसकी उँगलियाँ पकड़कर यह भी बताते थे कि किस प्रकार बजाने से क्या स्वर निकलेगा ? गायन की शिक्षा में भी वे अपने साथ

गाने को कहते थे। वे यह सब प्रत्यक्ष देखती थीं, पर दूसरे पास बैठे हुए लोगों को ऐसा कुछ नहीं दीखता।

रोजमेरी ने एक जीवित शिक्षक को परीक्षक के रूप में रखा था। यह सिर्फ देखता रहता था कि उसके प्रयोग ठीक चल रहे हैं या नहीं। ऐसा वह इसलिए करती थी कि कहीं उसकी अंतःचेतना झुठला तो नहीं रही है। उसके अभ्यास सही हैं या गलत। पर वह अध्यापक उसके प्रयोगों को शत-प्रतिशत सही पाता था। रोजमेरी लगभग ४०० प्रकार की ध्वनियाँ बजा लेती थी। बिना शिक्षक के टूटे पियानो पर बिना निज की उत्कट इच्छा के यह क्रम इतना आगे कैसे बढ़ गया ? इस प्रश्न पर विचार करते हुए अविश्वासियों को भी यह स्वीकार करना पड़ता है कि इस महिला के प्रयासों के पीछे निःसंदेह कोई अमानवी शक्तियाँ सहायता करती थीं।

रोजमेरी का जीवन गरीबी और कठिनाइयों से भरा था। वह एक स्कूल में रसोईदारिन का काम करती थी, उसी में से उसने समय निकाला और अपने अदृश्य सहायकों की सहायता से संगीत साधना का क्रम चलाया। लोगों ने उसके कथन में यथार्थता पाई तो उन्होंने स्वर्गीय आत्माओं द्वारा निर्देशित कुछ संगीत निर्देशावलियाँ नोट कराने का अनुरोध किया। उसने यह स्वीकार कर लिया। फलतः ३००० शब्दों की एक संगीत-निर्देश माला प्रकाशित हुई। नाम है उसका—टेन कामंटेटर फारम्युजिशिएन्स। इन निर्देशों के आधार पर जो ग्रामोफोन रिकार्ड (एल. पी.) बने हैं, उन स्वर्गीय आत्माओं के संगीत से परिचित लोगों को इस सादृश्य ने बहुत प्रभावित किया है।

मनोविज्ञान शास्त्र के सुप्रसिद्ध शोधकर्ता श्री मारिस वार्व नेल की मान्यता है कि रोजमेरी को अतींद्रिय श्रवण और दर्शन की विलक्षण शक्ति प्राप्त थी और वह उसी के सहारे प्रगति करती।

☆ रणभूमि में प्रत्यक्ष सहायता—मार्गदर्शन

एक तो युद्ध-स्थल, उस पर घनघोर अँधेरी रात और ऊपर से भयानक शीत, ऐसा लगता था वीभत्सता साकार होकर व्याप्त हो गई हो। एक तंबू के अंदर कुछ सैनिक कोयले की अँगीठी जलाये बैठे आँच ले रहे हैं। उनका वायरलेस सेट पास ही रखा है। युद्ध अभी खामोश है, इसलिये सब अपने-अपने घरों की याद कर रहे हैं, ऐसी ही चर्चा में वे सब संलग्न हैं, तभी वायरलेस पर कमांडर का हुक्म आता है। अपनी उत्तर वाली चौकी की सहायता के लिए तुरंत प्रस्थान करो।

घटना जम्मू-कश्मीर की है। सन् १९६१ में जब भारत का पाकिस्तान से युद्ध हुआ। यह सभी जवान जिस स्थान पर बैठे हैं, चौकी वहाँ से १५ मील दूर है। सबेरा होने से पहले ही वहाँ पहुँचना है। सबेरा हो जाने पर दुश्मन देख सकता था, मार सकता था। अतएव कैसी भी कठिनाइयों में सबेरा होने तक चौकी पहुँचना आवश्यक था। अतएव वहाँ से उसी प्रकार तत्परतापूर्वक आगे बढ़े, जिस तरह मृत्यु को कभी न भूलने वाले योगी मनुष्य जीवन को अस्त-व्यस्त तरीके से नहीं, व्यवस्थित—अनुशासनपूर्वक और तत्परता से जीते हैं।

१३ नवंबर की बात है। ठंडक के दिन थे। दस सिपाहियों की छोटी-सी टुकड़ी अपने अस्त्र सँभाले नक्शे के सहारे आगे बढ़ रही थी। वायरलेस से कमांड-पोस्ट का संपर्क बना हुआ। संवादों का आदान-प्रदान भी ठीक-ठीक चल रहा था कि एकाएक ऐसा स्थान आ पहुँचा, जहाँ से आगे बढ़ना नितांत कठिन हो गया। सारा स्थान बर्फ से ढक गया था। युद्ध में सैनिक नक्शों में नदी-नाले, टीले, वृक्ष आदि संकेतों के सहारे बढ़ते हैं, पर बर्फ ने पृथ्वी के सभी निशान मिटा डाले थे। नदी-झरने सब जम चुके थे। पेड़-पौधे तक बर्फ से ढके थे, ऐसी स्थिति में आगे बढ़ना मुश्किल हो गया। सभी

सैनिक निस्तब्ध खड़े रह गये, सोच नहीं पा रहे थे, क्या किया जाये ?

कहते हैं, युद्ध के समय अदृश्य आत्माओं की भावनाओं की संवेदनशीलता बढ़ जाती है। द्वितीय महायुद्ध के दौरान अतींद्रिय अनुभूतियों, मृतात्माओं के विलक्षण क्रिया-व्यापार संबंधी सैकड़ों घटनाओं के प्रामाणिक विवरण सैनिक रिकार्ड्स में पाये जाते हैं। यह घटना भी उसी तरह की है और प्रकाश डालती है कि मृत्यु के बाद भी आत्मा के चेतन शरीर का नाश नहीं होता। यदि आत्मा तुरंत मृत्योपरांत नींद में नहीं चली जाती और उसकी कोई प्रबल कामना भी नहीं होती, तो वह सांसारिक कर्तव्यों में जीवित व्यक्तियों को जीवित व्यक्तियों की भाँति ही सहायता पहुँचा सकती है। यह घटना उस तथ्य की पुष्टि में ही दी जा रही है। इस टुकड़ी में जो दस सैनिक थे, उन्हीं में से एक श्री गिरजानंद झा मस्ताना के द्वारा प्रस्तुत यह घटना सन् १९६२ के एक धर्मयुग अंक में भी छपी थी।

अभी सैनिक इस चिंता में ही थे कि अब किस दिशा में कैसे बढ़ा जाए कि किसी की पद-ध्वनि सुनाई दी ! अब तक आकाश में चंद्रमा निकल आया। आशंका से भरे सैनिकों ने देखा, सामने एक ऑफिसर खड़ा है। कंधे पर दो स्टार देखने से लगता था कि वह लेफ्टिनेंट हैं। देखते ही सैनिकों ने उन्हें सैल्यूट किया। सैल्यूट का उत्तर सैल्यूट से ही देकर लेफ्टिनेंट साहब बोले—देखो आगे का रास्ता भयानक है, तुम लोगों को कुछ मालूम नहीं है। चौकी दूर है और सबेरा होने में कुल चार घंटे बाकी हैं, इसलिए बिना देर किये तुम लोग मेरे पीछे-पीछे चले आओ। यह कहकर वे पीछे मुड़े—सैनिकों ने देखा लेफ्टिनेंट साहब की कमीज में पीठ पर गोल निशान है, लगता था उतना अंश जल गया था।

बिना किसी नक्शे के सहारे लेफ्टिनेंट साहब आगे-आगे ऐसे बढ़ते जाते थे, मानो वह सारा क्षेत्र उनका अच्छी तरह घूमा हुआ हो। सिपाही परेशान भी थे और चिंतित भी कि यह अजनबी

ऑफिसर इस इलाके के इतने माहिर क्यों हैं ? कभी-कभी आशंका भी हो जाती थी कि कहीं कोई दुर्घटना तो होने वाली नहीं है। चुपचाप चलने में खामोशी और उदासी-सी अनुभव हो रही थी। उस उदासी को दूर करते हुए कमांडर ने बताया—मेरी पीठ पर यह निशान जो तुम लोग देख रहे हो, वह कल की गोलाबारी का है—हम लोग हमले की तैयारी में थे, तभी पाकिस्तानी सेना ने गोलाबारी शुरू कर दी। सब लोग जमीन पर लेट गये, तभी एक बम आकर उधर फटा। उसी का एक टुकड़ा मेरी पीठ पर गिरा, जिससे कमीज जल गई . . . । इससे आगे कुछ और कहने से पूर्व उन्होंने बातचीत का रुख मोड़कर कहा—तुम लोग शायद आत्मा की अमरता पर विश्वास न करते हो, पर मैं करता हूँ। मरने के बाद आत्माएँ अपने जीवन-विकास की तैयारी करती हैं, जिसकी जो इच्छाएँ होती हैं, उसी तरह के जीवन की तैयारी में वे जुट जाती हैं। कोई इच्छा न होने पर भगवान् अपनी ओर से प्रेरित करके उसे आगे के क्रम में नियोजित करते हैं।

बातचीत करते-करते रास्ता कट गया और रात भी। जिस चौकी पर पहुँचना था, वह कुछ ही फर्लांग पर सामने दिखाई दे रही थी। ऑफिसर रुका, उसके साथ ही सभी सिपाही भी रुक गये। उसने पीछे मुड़कर कहा—देखो ! अब तुम लोग अपने स्थान पर आ गये अब तुम लोग जाओ, हम यहाँ से आगे नहीं जा सकते। सैनिकों ने सैल्यूट किया और आगे की ओर चल पड़े। ऑफिसर ने सलामी ली पर आगे नहीं बढ़ा। सैनिकों ने दस गज आगे जाकर, फिर पीछे की ओर उत्सुकतापूर्वक देखा कि साहब किधर जा रहे हैं ? किंतु वे आश्चर्यचकित थे कि वहाँ न तो कोई साहब था और न ही कोई व्यक्ति। दूर-दूर तक दृष्टि दौड़ाई, पर कहीं कोई दिखाई न दिया।

सिपाही चौकी पर पहुँचे, जहाँ कमांडर उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। रात में वायरलेस संपर्क टूट गया था। सैनिक कमांडर ने आते ही पूछा—तुम लोग इस बीहड़ मार्ग में इतनी जल्दी कैसे आ

गये ? तो उन्होंने बताया कि एक लेफ्टिनेंट उन्हें यहाँ तक लेकर आये, वे एक फर्लांग पहले कहीं अदृश्य हो गये।

लेफ्टिनेंट ?—उन्होंने आश्चर्यपूर्वक कहा। यहाँ तो कोई भी लेफ्टिनेंट नहीं, तुमको जिस व्यक्ति ने रास्ता दिखाया उसका हुलिया क्या था ? सिपाहियों ने एक ही हुलिया बताया, कमांडर आश्चर्यचकित रह गया उनका कथन सुनकर, क्योंकि जिस लेफ्टिनेंट के बारे में उन्होंने बताया, उनकी मृत्यु उसी स्थान पर एक ही दिन पहले गोला लगने से हो गई थी।

गोला लगने के बाद लेफ्टिनेंट की मृत्यु हो गई। युद्ध के समय कोई इच्छा या वासना न होना स्वाभाविक है। उस समय चित्तवृत्तियाँ एकाग्र रहती हैं। ध्यानस्थ एकाग्रता के साथ हुई मृत्यु के बाद लेफ्टिनेंट की जीवात्मा को मृत्यु के बाद भी नींद नहीं आई, उस समय भी उन्हें अपने कर्तव्य का भाव बना रहा। उन्होंने देखा कि इन सैनिकों को सहायता की आवश्यकता है, तभी उन्होंने अपने ही मृत शरीर में फिर से अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति द्वारा प्राणों का प्रवेश कर उससे उतनी देर काम ले लिया। टूटे-फूटे शरीर को यद्यपि देर तक सक्रिय रखना कठिन था, तथापि प्राण शक्ति द्वारा उतनी देर तक पूर्व शरीर को काम में लेकर, उन्होंने देशभक्ति और कर्तव्य भावना का आदर्श रखा, साथ ही सूक्ष्म शरीर की सत्ता और उसकी महान् महत्ता को भी प्रमाणित कर दिया।

पितर-सत्ताएँ ऐसी ही परमार्थ—परायणता, कर्तव्य भावना और निस्पृहता के साथ अपने सूक्ष्म शरीर द्वारा प्रत्यक्ष मार्गदर्शन एवं सहायताएँ किया करती हैं।

सच्ची श्रद्धा और भक्ति-भावना के साथ पितरों का स्मरण किया जाए, तो वे अशरीरी किंतु अति समर्थ सत्ताएँ निश्चय ही सत्प्रयोजनों में मदद के लिए आगे आ जाती हैं। इस संदर्भ में द्वितीय महायुद्ध की एक घटना विलक्षण प्रमाण है। इस युद्ध-शृंखला में मोन्स लड़ाई का यह प्रामाणिक और सुरक्षित युद्ध दस्तावेज विद्यमान है—

इस युद्ध में ब्रिटिश सेना बुरी तरह मारी-काटी गई। कुल ५०० सैनिक शेष रहे थे। जर्मन सेनाएँ उन्हें भी काट डालने की तैयारी में थीं। उनकी संख्या उस समय दस हजार थी। ब्रिटिश सैनिकों में से एक सिपाही ने कभी सेंट जार्ज की तस्वीर एक होटल में देखी थी। यह तस्वीर एक प्लेट में कढ़ी थी और उसके नीचे लिखा था—"सेंट जार्ज इंग्लैंड की सहायता करने को उपस्थित हों।" वह कभी इंग्लैंड के प्रख्यात सेनापति थे और अपने कई हजार सैनिकों के साथ युद्ध में मारे गये थे। उनकी याद आते ही सैनिकों ने अपनी संपूर्ण भावना और आत्म-शक्ति से सेंट जार्ज का स्मरण किया और दूसरे क्षण स्थिति कुछ और ही थी। बिजली सी कौंधी और ५०० सैनिकों के पीछे कई हजार श्वेत वस्त्रधारी सैनिकों की-सी आभा दिखाई देने लगी। दूसरे ही क्षण दस हजार सेना मैदान में मरी पड़ी थी। रहस्य तो यह था कि किसी भी सैनिक के शरीर में किसी भी अस्त्र का कोई चोट या घाव तक नहीं था। इस घटना ने इंग्लैंड में एक बार तहलका मचा दिया कि सचमुच मृत्यु के उपरांत आत्मा का अस्तित्व नष्ट नहीं होता वरन् रूपांतर होता है और यह आत्मायें अदृश्य होते हुए भी स्थूल सहायताएँ पहुँचा सकती हैं।

☆ वह गरीब देखते-देखते लखपति बन गया

अमेरिका के एक दरिद्र व्यक्ति आर्थर एडवर्ड स्टिलबैल ने अपनी जिंदगी ४० डालर प्रति मास जैसी कुलीगीरी की छोटी-सी नौकरी से आरंभ की और वह प्रेतात्माओं की सहायता से उच्च श्रेणी के यशस्वी धनवान् विद्वानों की श्रेणी में सहज ही जा पहुँचा।

पंद्रह वर्ष की आयु से ही उसके साथ छह प्रेतों की एक मंडली जुड़ गई और जीवन भर उसका साथ देती रही। इन छह प्रेत में तीन इंजीनियर, एक लेखक, एक कवि और एक अर्थ विशेषज्ञ था। इनके साथ उसकी मैत्री बिना किसी प्रयोग-परिश्रम के

अनायास ही हो गई और वे उसे निरंतर उपयोगी मार्गदर्शन कराते रहे।

प्रेतों ने उसकी लगी लगाई नौकरी छुड़वा दी और कहा—चलो तुम्हें बड़ा आदमी बनायेंगे। प्रेतों ने उसे अपने रेल मार्ग बनाने, अपनी नहर खोदने, अपना बंदरगाह बनाने के लिए कहा। बेचारा आर्थर स्तब्ध था कि नितांत दरिद्रता की स्थिति में किस प्रकार करोड़ों, अरबों रुपयों से पूरी हो सकने वाली योजनाएँ कार्यान्वित कर सकने में सफल होगा, पर जब प्रेतों ने उसे सब कुछ ठीक करा देने का आश्वासन दिया तो उसने कठपुतली की तरह सारे काम करते रहने की सहमति दे दी और असंभव दीखने वाले साधन जुटने लगे।

आर्थर पूरी तरह प्रेतों पर निर्भर था। उसके पास न तो ज्ञान था, न अनुभव और न साधन। फिर भी उसके शेखचिल्ली जैसे सपने एक के बाद एक सफलता की दिशा में बढ़ते चले गये और धीरे-धीरे अपनी सभी योजनाओं में जादुई ढंग से सफल होता चला गया। २६ सितंबर, १६२८ को वह मरा तो अपनी अरबों की धन-राशि छोड़कर मरा। उसकी अपनी पाँच लंबी रेलवे लाइनें थीं। जहाजों के आने-जाने की क्षमता से संपन्न विशालकाय नहर, पोर्ट-आर्थर, का वह स्वामी था। उसी के नाम एबना पोर्ट आर्थर बंदरगाह भी उसका अपना था और भी उसके कितने ही अरबों रुपयों की पूँजी के अर्थ संस्थान थे।

उसने साहित्य के तथा कविता के प्रति प्रसिद्ध तीस ग्रंथ भी लिखे जो साहित्य क्षेत्र में भली प्रकार सम्मानित हुए।

आर्थर से उसकी सफलताओं का जब भी रहस्य पूछा गया तो उसने अपने संरक्षक प्रेतों की चर्चा की और बताया कि प्रत्येक महत्त्वपूर्ण योजना, अर्थ साधनों की अर्थ व्यवस्था, कठिनाइयों की पूर्व सूचना, गतिविधियों में मोड़-तोड़ की सारी जानकारी और सहायता इन दिव्य सहायकों से ही मिलती रही है। उसकी अपनी योग्यता नगण्य थी। साहित्य-सृजन के संबंध में भी उसका यही

कथन था कि यह कृतियाँ वस्तुतः उसके लेखक और कवि प्रेत सहायकों की ही हैं। उसने तो कलम कागज भर का उपयोग करके यह प्राप्त किया है।

उदार पितर सत्ताएँ अपने सहयोग से मनुष्य की समृद्धि और प्रगति को ऐसे ही संभव बनाती हैं।

कुछ पितर सहज उदारता और सात्त्विक स्वभाववश सत्पात्रों को अनायास ही सहयोग-सत्प्रेरणा उँड़ेल देते हैं। कुछ को उनके अनुकूल दिव्य सहयोग-मार्गदर्शन के दायित्व ही सृष्टि-संचालक विराट् सत्ता द्वारा उसी प्रकार सौंप दिये जाते हैं; जिस प्रकार मनुष्य को इस सृष्टि-व्यवस्था को अधिकाधिक सुंदर-समृद्ध बनाने के दायित्व सौंप रखे गए हैं और अधिकांश मनुष्य भले ही अनुत्तरदायित्व की पराकाष्ठा का परिचय देते हों, किंतु प्राणवान्, परिष्कृत लोग तो अपने दायित्व का निर्वाह करते ही हैं।

कुछ पितर ऐसे भी होते हैं, जो आत्माभिव्यक्ति की आकांक्षा पूरा करने के लिए अनुकूल माध्यम स्वयं चुनते हैं। लेखन-संगीत-कला आदि के क्षेत्रों में अदृश्य सहयोग कई बार ऐसी पितर-सत्ताओं द्वारा भी प्रदान किया जाता है।

किसी पूर्वकृत उपकार के बदले प्रत्युपकार करने की पवित्र भावना के कारण भी कुछ पितरों द्वारा संबंधित लोगों को आकस्मिक सहायता दी जाती है।

श्रीमती बीजरूस से संबंधित घटना है। यह ७० वर्षीया वृद्धा कलात्मक सृजन की नवीन प्रेरणा पाने की अभिलाषा से सन् १९३६ में पेरिस पहुँची। वहाँ कई महीने रही, घूमी, पर कोई भी नवीन प्रेरणा वहाँ के वातावरण और व्यक्तियों-कलाकारों-कलाकृतियों के संपर्क से उसे नहीं मिली। वह कोई किशोरी तो थी नहीं। दुनिया देख चुकी थी। अपने विषय का गहन अध्ययन करती रही थी। इसलिए उसने पाया कि इन दिनों पेरिस में कला क्षेत्र में जो कुछ भी है वह पुरातन प्रेरणाओं से रहित है। अभिनव-प्रेरणा के योग्य वहाँ कुछ न था।

महीनों की व्यर्थता ने उन्हें मात्र व्यग्रता दी। उन्हें वहाँ आना निरर्थक ही प्रतीत हुआ। रात में ठीक से नींद भी न आती।

ऐसी ही उदासी और मानसिक थकान से भरी एक रात में वे करवटें बदलते देर तक जागती रहीं। आखिर उन्हें नींद आ गई। गहरी नींद के तीन घंटे बीते, तभी जैसे किसी ने उन्हें जगा दिया। वे स्वयं को तरोताजा अनुभव कर रही थीं, जैसे नई ताजगी और नया प्रकाश उनके भीतर भर गया हो। तभी उनकी अंतःप्रेरणा उन्हें स्टूडियो की ओर चलने को कहने लगीं। उन्हें कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था, परंतु मानो वे विवश थीं।

वे स्टूडियो पहुँची और अँधेरे में ही कागज पर ब्रुश चलाने की अविज्ञात प्रेरणा ने उन्हें ऐसा ही करने को बाध्य कर दिया। वे यह देखकर चकित भी थीं और पुलकित भी कि उनके हाथ स्वतः बड़ी तेजी से चल रहे हैं। वे स्पष्ट अनुभव कर रही थीं कि वे इस समय किसी अविज्ञात शक्ति का माध्यम मात्र है और जो हो रहा है, उस पर उनका वश नहीं है। देर तक यह होता रहा। तब उनका हाथ स्वतः रुक गया और उसी अंतःप्रेरणा से वे फिर अपने बिस्तर पर जा पहुँचीं, लेट गईं और सो गईं। सब कुछ मानो विवशता में घटित हो रहा था।

सुबह वे जगीं, तब उन्हें रात्रि का घटनाक्रम याद आया। उत्सुकता उमड़ पड़ी। वे स्टूडियो की ओर बढ़ गईं। वहाँ जाकर निपट अँधेरे में अनायास बन गए उस चित्र को देखा तो विस्मय-विमुग्ध हो उठीं। किसी अज्ञात सुंदरी का अनुपम चित्रांकन था वह। उन्हें लगा कि कभी उन्होंने यह चित्र कहीं किसी प्रख्यात कलाकार द्वारा बना देखा है, पर स्मृति पूरी तरह साथ नहीं दे रही थी।

चित्र को कला-बाजार में लाने से पहले, वे अपनी इस जिज्ञासा को शांत कर लेना चाहती थीं कि यह असामान्य और उत्कृष्ट कलाकृति इस विचित्र ढंग से बनी कैसे ?

उन्होंने ऐसी महिला से संपर्क किया, जो प्रेत विद्या विशारद् के रूप में प्रसिद्ध थी। उससे यह निवेदन किया कि इस रहस्य का पता लगाए।

उस महिला ने अपनी संपर्क-विद्या द्वारा पता लगाकर जो कुछ बताया, वह यों है—"संपर्क के दौरान गोया की प्रेतात्मा ने आकर बताया कि मैं अपने अंतिम दिनों में सन् १८२८ ई० में स्पेन के अपने विरोधियों से दूर रहने के लिए दक्षिणी फ्रांस में उक्त महिला के पति के पूर्वजों के घर पर रहा था। उन दिनों मैं असहाय था। उस स्थिति में दी गई मदद का मैं बदला चुकाना चाहता था, पर आज तक मेरे उपयुक्त कोई अवसर न मिला। अब उन कलाकार-महिला को मानसिक कष्ट में देखकर, यह अवसर अपने अनुकूल पाया तब उन्हें ऐसी प्रेरणा दी तथा इस कृति का सृजन संभव बनाया, जो मेरी कृति 'ग्वालिन' से साम्य रखती हैं।"

सचमुच उस कृति का साम्य 'ग्वालिन' से था, जो प्रख्यात चित्रकार गोया की विशिष्ट कला-कृतियों में से एक है। यह तो श्रीमती बीजरूस को याद आ गया, पर गोया के जीवन के बारे में उन्हें और कुछ ज्ञात नहीं था। उनकी उत्सुकता बढ़ चुकी थी। अतः उन्होंने गोया की जीवनी एक पुस्तकालय से लेकर पढ़ी। तब स्पष्ट हुआ कि गोया ने अपने जीवन के अंतिम दिन श्री रोजेरिग्रो बीज के घर बिताए थे, जो श्रीमती बीजरूस के श्वसुर थे। माध्यम-महिला के बताए विवरणों की पूर्ण पुष्टि हो गई।

इस मामले की जाँच अमेरिकी मनःशास्त्री डॉक्टर स्टीवेंसन कर चुके हैं व प्रामाणिक ठहराया है। इससे स्पष्ट होता है कि गोया की आत्मा ने, जिसे स्वर्गस्थ पितर ही कहा जायेगा, इस प्रकार अपनी कृतज्ञता व्यक्त की व प्रत्युपकार किया। यहीं यह भी स्पष्ट होता है कि पितरों की अपनी भी सीमाएँ होती हैं। उनका जो व्यक्तित्व विकसित हो चुका होता है, उसी के तारतम्य में ही वे

अशरीरी रूप में भी कार्य कर सकते हैं। गोया की आत्मा ने कलाकृति के सृजन के रूप में सहयोग देना ही सुगम पाया।

इस प्रकार पितर अपनी क्षमता-योग्यता, रुचि-स्वभाव, संस्कार तथा आकांक्षा के अनुसार जीवन के विविध क्षेत्रों में सत्पात्रों की सहायता-सहयोग करते रहते हैं। इसके लिए आंतरिक सात्त्विकता, सौम्यता, मृदुता तथा पितरों के प्रति श्रद्धा-सद्भावना से संपन्न होना अधिक अनुकूल सिद्ध होता है।

☆ अविज्ञात को अनुकंपा के प्रति अकृतज्ञ न हों

उपनिषद् के ऋषि का अनुभव है कि आत्मा जिसे वरण करता है, उसके सामने अपने रहस्यों को खोलकर रख देता है। इस उक्ति का निष्कर्ष यह है कि रहस्यों का उद्घाटन चेतना की गहराइयों से होता है। मानवी संसार की सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जब जितने अनुदान आवश्यक होते हैं, उसी अनुपात से कोई अविज्ञात अपने अनुदान इस धरती पर उतारता रहता है। यह अवतरण जिनके माध्यमों से होता है, वे सहज ही श्रेयाधिकारी बन जाते हैं।

वैज्ञानिक आविष्कार का श्रेय यों उन्हें मिलता है, जिनके द्वारा वे प्रकाश में आने योग्य बन सके, किंतु यहाँ यह विचारणीय है कि क्या उसी एक व्यक्ति ने उस प्रक्रिया को संपन्न कर लिया ? आविष्कर्ता जिस रूप में अपने प्रयोगों को प्रस्तुत कर सके हैं, उसे प्रारंभिक ही कहा जा सकता है। सर्वप्रथम प्रदर्शन के लिए जो आविष्कार प्रस्तुत किये गये, वे कौतूहलवर्धक तो अवश्य थे, आशा और उत्साह उत्पन्न करने वाले भी, पर ऐसे नहीं थे जो लोकप्रिय हो सकें और सरलतापूर्वक सर्वसाधारण की आवश्यकता पूरी कर सकें। रेल, मोटर, टेलीफोन, हवाई जहाज आदि के जो नमूने पंजीकृत कराये गये थे, उनकी स्थिति ऐसी नहीं थी कि उन्हें सार्वजनिक प्रयोग के लिए प्रस्तुत किया जा सके ? यह स्थिति धीरे-धीरे बनी है और उस विकास में न्यूनाधिक उतना ही मनोयोग

और श्रम पीछे वालों को भी लगाना पड़ा है, जितना कि आविष्कर्ताओं को लगाना पड़ा था।

संसार के महान् आंदोलन आरंभिक रूप में बहुत छोटे थे; उनके आरंभिक स्वरूप को देखते हुए कोई यह अनुमान नहीं लगा सकता था कि कभी वे इतने सुविस्तृत बनेंगे और संसार की इतनी बड़ी सेवा कर सकेंगे, किंतु अविज्ञात ने जहाँ उन आंदोलनों को जन्म देने वाली प्रेरणा की निर्झरणी का उद्गम उभारा, किसी परिष्कृत व्यक्ति के माध्यम से उसे विकसित किया, साथ ही इतनी व्यवस्था और भी बनाई कि उस उत्पादन को अग्रगामी बनाने के लिए सहयोगियों की शृंखला बनती-बढ़ती चली जाए। ईसा, बुद्ध, गाँधी आदि के महान् आंदोलनों का आरंभ और अंत—बीजारोपण और विस्तार देखते हुए लगता है कि यह श्रेय-साधन किसी अविज्ञात के संकेतों पर चले और फले-फूले हैं। इन अविज्ञात शक्तियों में पितर—सत्ताओं का भी समावेश है।

जिन आविष्कर्ताओं को श्रेय मिला, उन्हें सौभाग्यशाली कहा जा सकता है। गहरे मनोयोग के सत्परिणाम क्या हो सकते हैं ? इसका उदाहरण देने के लिए भी उनके नामों का उत्साहवर्धक ढंग से उल्लेख किया जा सकता है। गहराई में उतरने की प्रेरणा भी उस चर्चा से कितनों को ही मिलती है। पर यह भुला न दिया जाना चाहिए कि उन आविष्कारों-आरंभों के रहस्य प्रकृति ही अपना अंतराल खोलकर प्रकट करती है। हाँ, इतना अवश्य है कि इस प्रकार के रहस्योद्घाटन हर किसी के सामने नहीं होते। प्रकृति को भी पात्रता परखनी पड़ती है। अनुदान और अनुग्रह भी मुफ्त में नहीं लूट जाते, उन्हें पाने के लिए भी उपयुक्त मनोभूमि तो उस श्रेयाधिकारी को ही विनिर्मित करनी पड़ती है।

आविष्कारों की चर्चा इतिहास पुस्तकों में जिस प्रकार होती है, वह बहुत पीछे की स्थिति है। आरंभ कहाँ से होता है ? यह देखना हो तो पता चलेगा कि उन्हें आवश्यक प्रकाश और संकेत अनायास ही मिला था। इनमें उनकी पूर्ण तैयारी नहीं के बराबर थी। दूसरे

शब्दों में कहा जाए तो यह भी कह सकते हैं कि उन पर इलहाम जैसा उतरा और कुछ बड़ा कर गुजरने के लिए आवश्यक मार्गदर्शन देकर चला गया। संकेतों को समझने और निर्दिष्ट पथ पर मनोयोगपूर्वक चल पड़ने के लिए तो उन आविष्कर्ताओं की प्रतिभा को सराहना ही पड़ेगा।

बात लगभग दो हजार वर्ष पुरानी है। एशिया माइनर के कुछ गड़रिये पहाड़ी पर भेड़ें चरा रहे थे। उनकी लाठियों के पैंदे में लोहे की कीलें जड़ी थीं। उधर से गुजरने पर गड़रियों ने देखा कि लाठी पत्थरों से चिपकती है और जोर लगाने पर ही छूटती है। पहले तो इसे भूत-प्रेत समझा गया फिर पीछे खोजबीन करने से चुंबक का विज्ञान यहीं से आरंभ हुआ। आज तो चुंबक एक बहुत बड़ी शक्ति की भूमिका निभा रहा है।

यह गड़रिये चुंबक का आविष्कार करने का उद्देश्य लेकर नहीं निकले थे और न उनमें इस प्रकार के तथ्यों को ढूँढ़ निकालने और विश्वव्यापी उपयोग के लायक किसी महत्त्वपूर्ण शक्ति को प्रस्तुत कर सकने की क्षमता ही थी।

न्यूटन ने देखा कि पेड़ से टूटकर सेव का फल जमीन पर गिरा। यह दृश्य देखते सभी रहते हैं, पर न्यूटन ने उस क्रिया पर विशेष ध्यान दिया और माथा-पच्ची की कि फल नीचे ही क्यों गिरा, ऊपर क्यों नहीं गया ? सोचते-सोचते उसने पृथ्वी की आकर्षण शक्ति का पता लगाया और पीछे सिद्ध किया कि ग्रह-नक्षत्रों को यह गुरुत्वाकर्षण ही परस्पर बाँधे हुए है। इस सिद्धांत के उपलब्ध होने पर ग्रह विज्ञान की अनेकों प्रक्रियाएँ समझ सकना सरल हो गया।

पेड़ से फल न्यूटन से पहले किसी के सामने न गिरा हो ऐसी बात नहीं है। असंख्यों ने यह क्रम इन्हीं आँखों से देखा होगा, पर किसी अविज्ञात ने अकारण ही उसके कान में गुरुत्वाकर्षण की संभावना कह दी और उसने संकेत की पूँछ मजबूती से पकड़कर श्रेय प्राप्त कराने वाली नदी पार कर ली।

अब से ३०० वर्ष पुरानी बात है। हालैंड का चश्मे बेचने वाला ऐसे ही दो लैंसों को एक के ऊपर एक रखकर, उलट-पुलट का कौतुक कर रहा था। दोनों शीशों को संयुक्त करके आँख के आगे रखा तो विचित्र बात सी दिखाई पड़ी। उसको गिरजा बहुत निकट लगा और उस पर की गई नक्काशी बिल्कुल स्पष्ट दीखने लगी। दूरबीन का सिद्धांत इसी घटना से हाथ लगा और अब अनेक प्रकार के छोटे-बड़े दूरबीन विज्ञान की शोधों में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

चश्मे बेचना एक बात है और दूरबीन दूसरी। दोनों के बीच सिद्धांत और व्यवहार का कोई सीधा तालमेल नहीं है। फिर भी संकेत देने के लिए इस संगति भर से काम चल गया। प्रकृति ने एक रहस्य उसके ऊपर उड़ेल ही दिया।

सन् १८९५ की बात है। प्रो० राब्टजन अपनी प्रयोगशाला में एक हवा रहित काँच की नली में होकर विद्युत्-प्रवाह छोड़ने संबंधी प्रयोग कर रहे थे। संयोगवश उसी कमरे में अन्यत्र फोटोग्राफी प्लेटें बंद बक्से में रखी थीं। प्लेटें जब काम में लायी गईं तो उन पर प्रयोग समय के दृश्य अंकित पाये गये। बंद बॉक्स में घटना चित्र कैसे पहुँचे ? इस खोज से "एक्स-रे" का आविष्कार हो गया। सभी जानते हैं कि आज रोगों के निदान और सर्जरी में एक्स किरणों की सहायता से उतारे जाने वाले चित्रों का कितना अधिक योगदान है ?

एक्स-रे के आविष्कार का श्रेय जिस व्यक्ति को मिला, उसे सौभाग्यशाली कहने में हर्ज नहीं, पर प्रयोगशाला में ऐसा सुयोग जान-बूझकर नहीं बनाया था। उस संयोग के पीछे कोई अविज्ञात ही काम कर रहा होगा। अन्यथा ऐसे-ऐसे संयोग आये दिन न जाने कितने सर्वसाधारण के सामने आते रहते हैं। उसकी ओर ध्यान जाने का कोई कारण भी नहीं होता।

बात आविष्कारों की हो या आंदोलनों की, श्रेय साधनों का शुभारंभ 'अविज्ञात' की प्रेरणा से होता है। इस अविज्ञात को ब्रह्म

कहा जाए या प्रकृति, इस पर बहस करने की आवश्यकता नहीं। श्रेय लक्ष्य है। प्रगति अभीष्ट है। वह आत्मा के, परमात्मा के, उद्‌गम से आविर्भूत होता है तथा एक सहयोगी शृंखला का परिपोषण पाकर विकसित होता है। यह सहयोग पितरों एवं स्वर्गीय श्रेष्ठ आत्माओं द्वारा भी प्राप्त होता है—देवसत्ताओं द्वारा भी तथा सर्वोच्च सत्ता की अव्यक्त प्रेरणा द्वारा भी।

गड़रियों ने जब अग्नि का आविष्कार किया, उस समय पहले तो आग की चिनगारियों को उन्होंने भूतों का ही उपद्रव समझा, पीछे पितरों की कृपा मान उत्सव मनाया, आनंदित हुए और पितरों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की।

श्रद्धा-भाव रखने तथा श्रेष्ठ जीवन-क्रम अपनाए रहने पर उच्चस्तरीय पितर-सत्ताएँ सचमुच ऐसे ही महत्त्वपूर्ण सहयोग-अनुदान, प्रकाश-प्रेरणाएँ प्रदान करती हैं, जो व्यक्ति एवं समाज के जीवन को सुख-सुविधाओं से भर देती हैं। उन पितरों की अपेक्षा यही रहती है कि इन उदार अनुदानों का दुरुपयोग न हो। परमेश्वर की भी तो मनुष्यों से यही अपेक्षा रहती है। पर कृतघ्न मनुष्य इतनी-सी अपेक्षा भी पूरी नहीं कर पाता।

❐❐

लूट-खसोट, अनीति-अन्याय की अवरोधक पितर-सत्ताएँ

भूमिगत विशेषता एवं संपदा का निर्माण इस तालमेल के साथ हुआ है कि उस क्षेत्र के निवासी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते रह सकें। अन्न, फल और औषधियों के बारे में प्रसिद्ध है कि वहाँ के जन्मे लोगों को उसी क्षेत्र का उत्पादन अनुकूल पड़ता है। द्रुतगामी साधनों से पदार्थों को सुदूर स्थानों तक भेजा जा सकता है, पर प्राणियों की, पदार्थों की संरचना में जो तत्त्व घुले रहते हैं, उनका तालमेल न बैठ पाने से लाभदायक प्रतीत होते हुए भी हानिकारक बैठते हैं। क्षेत्रीयता की बात ऐसे ही कई दृष्टिकोणों के आधार पर बहुत महत्त्वपूर्ण तथ्य के रूप में सामने आती है।

खनिज पदार्थों एवं अन्य प्रकृति-संपदाओं के संबंध में भी यही बात है। वे उस क्षेत्र के निवासियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर वितरित की गई हैं। उत्तरी ध्रुव के निवासी मनुष्यों और प्राणियों की शारीरिक संरचना तथा उपलब्ध पदार्थ सामग्री को देखते हुए सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि प्रकृति की वितरण व्यवस्था कितनी दूरदर्शितापूर्ण है ? खनिज तथा अन्यान्य प्रकृति संपदाओं के संबंध में भी यही बात है।

क्षेत्रीय उपलब्धियों से लाभान्वित होने का प्रथम अधिकार यहाँ के भूमि पुत्रों का है। इसके बाद अन्यत्र के लोगों को उससे लाभान्वित होने का अवसर मिलना उचित है। इसी आधार पर देशों के क्षेत्रीय अधिकारों को मान्यता मिलती रही है। उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद की निंदा का कारण यही है कि स्थानीय लोगों के लिए दी गई प्रकृति-उपलब्धियों का अपहरण अन्यत्र के लोग करते हैं तो उससे अव्यवस्था एवं अनीति का फैलना स्वाभाविक है। ऐसे शोषण-अपहरण का जहाँ विश्व न्याय के आधार पर विरोध होता है, वहाँ ईश्वरीय व्यवस्था भी उसे निरस्त करने में सहायक होती है।

प्रकृति-प्रतिरोध का परिचय तब अधिक अच्छी तरह देखा जा सकता है, जब समर्थों द्वारा असमर्थों के स्वत्वों का अपहरण करने वाली अनीति का आचरण उभरता है।

अमेरिका की भूमि पर मूल अधिकार उस देश के मूल निवासियों का ही माना जा सकता है। वहाँ की प्रकृति-संपदा का लाभ भी उन्हीं को मिलना चाहिए। गोरे लोगों ने बलपूर्वक उस भूमि पर अधिकार कर तो लिया है, पर प्रकृति वहाँ के मूल निवासियों के पक्ष में ही अपना समर्थन देती है और लुटेरों को असफल बनाने वाले आधार खड़े करती रहती है। इस संबंध में वहाँ के स्वर्ण क्षेत्रों में गोरों की असफलता विशेष रूप से विचारणीय है।

अमेरिका के ऐरिजेना प्रांत में कुछ खाई-खड्डों से भरे सघन वन प्रदेश ऐसे हैं, जो न केवल अगम्य और डरावने हैं वरन् उनमें रहस्य भरी विशेषताएँ भी पाई जाती हैं। यह रहस्य अलौकिकवादियों और वैज्ञानिक शोधकर्ताओं के लिए एक पहेली बनी हुई है।

कहा जाता है कि उस प्रदेश में या तो आसमान से सोने के धूलि कण बरसते हैं, या फिर पहाड़ उसे अदृश्य लावे की तरह उगलते हैं, जो हो उस क्षेत्र की पहाड़ियों को सोने के पर्वत का नाम दिया जाता है और अनेकों उस संपदा को सहज ही प्राप्त कर लेने के लालच में उधर जाते भी रहते हैं।

संपत्ति का लोभ जितना आकर्षक है, उतने ही वहाँ के प्रहरी प्रेत-पिशाचों के आतंक का भय भी बना रहता है। इस उपलब्धि के लिए अब तक सहस्त्रों दुस्साहसी उधर गये हैं। इनमें से अधिकांश को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा है। जो किसी प्रकार जीवित लौट आये हैं उन्होंने सोने के अस्तित्व का तो आँखों देखा विवरण सुनाया है, पर साथ ही यह भी कहा है कि वहाँ अदृश्य आत्माओं का आतंक असाधारण है। वे सोना बटोरने के लालच से जाने वालों का बेतरह पीछा करती हैं और यदि भाग खड़ा न हुआ जाये तो जान लेकर ही छोड़ती हैं।

भूमिगत विशेषताओं का अन्वेषण करने जो लोग पहुँचे हैं, उन्होंने इस क्षेत्र को रूस के साइबेरिया की ही तरह रेडियो किरणों से प्रभावित पाया है। रूसी वैज्ञानिक साइबेरिया के कई क्षेत्रों को किसी अज्ञात विकरण से प्रभावित मानते हैं और कहते हैं कि कभी अंतरिक्ष या धरती से यहाँ अणु विस्फोट जैसी घटना घटी है। ऐसा किसी उल्कापात से भी हो सकता है। अमेरिकी लोग भी इस क्षेत्र की तुलना लगभग उसी रूसी प्रदेश से ही करते हैं। यहाँ एक ६०० फुट गहरा और एक मील लंबा खड्ड है। समझा जाता है कि यह किसी उल्कापात का परिणाम है। उस क्षेत्र में से किसी उद्देश्य से जाने वाले व्यक्तियों पर संभवतः विद्यमान रेडियो विकरण ही आतंकित करने जैसा प्रभाव उत्पन्न करता होगा और उस अप्रत्याशित प्रभाव को भूत-पलीतों का आक्रमण मान लिया जाता होगा।

रहस्यवादियों का मत है कि योरोपियनों के इस क्षेत्र पर कब्जा जमाने से पहले आदिवासी लोग रहते थे। इनमें से अपैंची कबीला मुख्य था। उसके साथ गोरों की झड़पें होती रहीं और इन मार्ग के कंटकों को हटाने के लिए अधिकर्ताओं द्वारा क्रूरतापूर्ण नर-संहार किये जाते रहे। इन मृतकों की आत्माएँ ही प्रतिशोध से भरी रहती हैं और जो इधर से गुजरता है, उस पर टूट पड़ती हैं।

कारण क्या है ? यह तो अभी ठीक तरह नहीं समझा जा सका, किंतु सोना बरसने और आतंक छाये रहने की बात सच है। गाथा और किंवदंतियाँ तो बहुत दिनों से प्रचलित थीं। वहाँ जाने और कुछ कमाकर लाने की बात भी बहुतों ने सोची, पर साहस सबसे पहले पाइलीन वीवर ने किया। वह अपने कुछ साथियों के साथ आवश्यक सामान लेकर गया और उस क्षेत्र में डेरा लगाया। दूसरे साथी तो सो गये, पर वीवर को नींद नहीं आई। वह अकेला उठा और कौतूहल में दूर तक चला गया। उस जगह सोने के टुकड़े पाये। ध्यान से देखा तो वे शत-प्रतिशत सोने के थे। उसने बहुत से कड़े जमा कर लिए और जितना वजन उठ सकता था,

उतना साथ लेकर वापस लौटा। लौटते ही उसकी खुशी आतंक में बदल गई। डेरा जला हुआ पड़ा था और वहाँ सामान्यतया मनुष्यों की राख भर बनी हुई थी। आँख उठाकर पर्वत की चोटी को देखा तो वहाँ से गिद्धों के झुंड की तरह भयानक छायाएँ उसकी ओर बढ़ती आ रही दिखाई पड़ीं। डर के मारे वह बेहोश हो गया। बहुत समय बाद जब होश आया तो किसी प्रकार भाग चलने का उपाय निकाला और जैसे-तैसे घर वापस आ गया।

इस घटना की चर्चा तो बहुत हुई, पर दुबारा उधर जाने का साहस किसी में भी नहीं हुआ। इसके १६ वर्ष बाद मैक्सिको का एक दुस्साहसी पैरलटा एक मजबूत और साधन संपन्न जत्था लेकर उधर गया। उस दल के प्रायः सभी व्यक्ति उसी प्रयास में मर गये, केवल एक ही उनमें से जीवित लौटा। उसने सोने का उपस्थिति और मँड़राने वाली विपत्ति के जो विवरण सुनाये, उसने कौतूहल तो बहुत बढ़ाया, पर नये जत्थों के उधर जाने का साहस उत्पन्न नहीं किया।

छुटपुट रूप से अनेकों व्यक्ति एकाकी अथवा टुकड़ियाँ बनाकर उधर जाते रहे, किंतु किसी को जान गँवाने के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं लगा। इसके बाद अमेरिका का ख्याति नामा डॉक्टर लवरेन कोमली का अभियान था। वे बहुत तैयारी और चर्चा के साथ गये थे। साधनों और जानकारी की जितनी आवश्यकता थी, वह उसने जुटा ली थी। साथी बीच में से ही लौट आये और मायाविनी छायाओं के आतंक के भयानक विवरण सुनाते रहे। लवरेन ने खोज को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था। वे अकेले ही बढ़ते गये, किंतु सोने के स्थान पर पागलपन साथ लेकर वापस लौटे। कुछ दिन भयभीत विक्षिप्तता के शिकार रहकर, वे भी मौत के मुँह में चले गये।

होनोलूलू के व्यवसाइयों का एक जत्था स्वर्ण-संपदा को प्राप्त करने के उद्देश्य से उधर गया और आस्ट्रेलिया के युवक फैज ने रहस्यों पर से पर्दा उठाने की ठानी। पर उन्हें भी असफलता ही

हाथ लगी। जर्मनी के इंजीनियरों का एक दल वालेज के नेतृत्व में बड़े दमखम के साथ उधर पहुँचा। वालेज अपने पूर्ववर्ती शोधकर्ताओं की तुलना में अधिक चतुर था, उसने उस क्षेत्र की एक आदिवासी युवती को ललचा कर विवाह कर लिया और उसकी सहायता से स्वर्ण भंडार के स्थान तथा छायाओं के भेद जानने का प्रयत्न करने लगा। छायाओं को यह पता लग गया। उन्होंने युवती का अपहरण कर लिया और वालेज की जीभ काट ली। इसी कष्ट में उसकी मृत्यु हो गई।

उसकी डायरी किसी प्रकार साथियों को मिल गई। उसके विवरणों से पता चलता है कि उसने स्वर्ण स्रोतों का पता लगा लिया था। भूमिगत कई रहस्यमय स्थान देखे, ढूँढ़े और प्रेतात्माओं को चकमा देकर बच निकलने में सुरंगों के माध्यम से सफल होता रहा। इतना सब उसकी आदिवासी पत्नी की सहायता से ही संभव हो सका, किंतु दुर्भाग्य ने उसका पीछा छोड़ा नहीं और अपनी जान गँवा बैठा। यह प्रयत्न सन् १८६१ का है। इसके बाद अंतिम प्रयत्न सन् १९५६ में हुए। स्टेनलोफर्नेल्ड और फरेश नामक दो व्यक्तियों ने संयुक्त प्रयत्न नये सिरे से सोना पाने के लिए किये। उसमें पूर्ववर्ती कठिनाइयों और सफलताओं को पूरी तरह ध्यान में रखा गया। इस बार की तैयारी अधिक थी। प्रयत्न भी बड़े पैमाने पर और अधिक दिन चले, पर उसका निष्कर्ष इतना ही निकला कि फरेश प्राणों से हाथ धो बैठा और फर्नेल्ड किसी प्रकार जान बचाकर, वापस लौट जाया। पल्ले कुछ नहीं पड़ा।

इस स्वर्ण अभियान में जितने मृतकों की लाशें मिल सकीं, इनको देखने पर एक ही निष्कर्ष निकला कि वे सभी मौतें शरीर से खून चूस लिये जाने के कारण हुईं। इनमें से किसी की भी देह में कहीं छेद नहीं पाये गये और न कहीं कपड़ों पर या जमीन पर रक्त बिखरा हुआ ही पाया गया फिर यह रक्त चूसने की क्रिया किसके द्वारा किस प्रकार की गई ? यह अभी भी उतना ही रहस्यमय बना हुआ है जितना पहले कभी था।

लगता है सूक्ष्म जगत् में ऐसे किन्हीं अदृश्य प्रहरियों की चौकीदारी भी विद्यमान है, जो न्याय का समर्थन और लूट-खसोट का प्रतिरोध करने के लिए अपनी जागरूकता का परिचय देते रहते हैं। संभवतः उस क्षेत्र की स्वर्ण-संपदा की रखवाली वे ही करते हों। यह भी अनुमान लगाने की गुंजायश है कि जिनके स्वत्वों का अपहरण किया गया, जिन्हें निर्दयतापूर्वक मारा गया उनकी आत्माएँ प्रतिशोध की भावनाएँ भरे हुए उस इलाके में निवास करती हों और उनकी रोकथाम से मुफ्त का धन पाने वालों को असफल रहना पड़ता हो। आत्माओं द्वारा न्याय के संरक्षण और अनौचित्य का प्रतिरोध एक तथ्य है। साथ ही प्रकृति व्यवस्था में स्थानीय भूमि-पुत्रों के लाभान्वित होने की जो नीति मर्यादा है उसका उल्लंघन ऐसे कारण उत्पन्न कर सकता है, जैसे कि अमेरिका में स्वर्ण उपलब्ध करने वालों को भुगतने पड़े हैं।

☆ सूक्ष्म-शक्तियों के उभार के विलक्षण परिणाम

मनःशास्त्री फ्लैमैरियन का कथन है—मानवी विद्युत् की एक गहरी परत ओजस् है, इसकी समुचित मात्रा उपलब्ध हो तो मनुष्य सूक्ष्म अतींद्रिय शक्तियों से संपन्न हो सकता है। मानवी विद्युत् पर विशेष खोज करने वाले विक्टर ई० क्रोमर का कथन है—मनः-शक्ति को घनीभूत करने की कला में प्रवीणता प्राप्त करके, उसे किसी दिशा विशेष में प्रयुक्त किया जा सकता है। यह इतना बड़ा शक्ति स्रोत है कि मानवी व्यक्तित्व का कोई भी पक्ष उस प्रयोग से अधिक प्रखर और उज्ज्वल बनाया जा सके। यह प्रयोग यदि अपनी सूक्ष्म शक्तियाँ तलाश करने और उभारने पर केंद्रित किया जा सके तो अतींद्रिय चेतना के क्षेत्र में आशाजनक सफलता मिल सकती है।

बहाई धर्म के संस्थापक महात्मा बाब को प्राचीन परंपराओं से भिन्न स्थापनाएँ करने के कारण तत्कालीन शासन ने मृत्यु दंड सुनाया, उन्हें ९ जुलाई, १८५० को प्रातः १० बजे सरेआम तबरीज

के मैदान में गोली से उड़ाया जाना था। दस हजार दर्शक उपस्थित थे। महात्मा बाव और उनके एक अनुयायी को रस्सों से कसकर, अधर में लटकाया गया और ढाई-ढाई सौ सैनिकों की तीन टुकड़ियाँ भरी हुई बंदूकें लेकर खड़ी की गईं। एक टुकड़ी एक साथ ढाई सौ गोली दागे, यदि फिर भी अपराधी बच जाएँ तो दूसरी टुकड़ी अपनी बारी पर गोलियाँ चलाए और इस पर भी कोई कमी रह जाए, तो तीसरी टुकड़ी भी अपने निशाने लगाये। ७५० गोलियों में से एक भी न लगे, ऐसा नहीं हो सकता था। उन दिनों मृत्यु दंड का प्रायः यही रिवाज था।

व्यवस्था के अनुसार गोलियाँ बराबर दागी गईं, पर ७५० में एक भी निशाना नहीं लगा और महात्मा बाव अपने अनुयायी सहित साफ बच गये।

यह घटना वैसी किंवदंती नहीं है जैसी कि आमतौर से लोग अपने प्रिय देवता या गुरु का महत्त्व बढ़ाने के लिए गढ़ लिया करते हैं और उसे फैलाकर अन्य लोगों को आकर्षित करते हैं।

इंग्लैंड की सरकार के विदेश विभाग में सार्वजनिक दफ्तर में इस घटना की साक्षी में एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज मौजूद है। यह २२ जुलाई, १८५० का लिखा हुआ है और इसका रिकार्ड नंबर F. O. ६०।९५३।८८ है। यह महारानी विक्टोरिया के विशेष प्रतिनिधि प्लेनीपोटेन्शियरी के प्रधान सर जस्टिनशील का लिखा हुआ हैं। उसमें इस घटना की प्रत्यक्षदर्शी पुष्टि की गई है।

समर्थ महात्मा अपनी सूक्ष्म-शक्तियों का प्रयोग—कुतूहलवर्धन और चमत्कार-प्रदर्शन के लिए भले ही कभी भी न करें, किंतु अत्याचार-अन्याय के विरोध में वे निश्चय ही आगे आते हैं। यही बात अदृश्य सूक्ष्म-शक्तियों, पितर-सत्ताओं के बारे में भी है।

परमात्म-सत्ता के संकेतों को समझने वाले, वे शरीरधारी महामानव हों, या अशरीरी सूक्ष्म सत्ताएँ अन्याय-अधर्म के उन्मूलन के लिए अपनी शक्तियों का उसी प्रकार प्रयोग करते हैं, जिस प्रकार वह सर्वोच्च सत्ता स्वयं करती है। इस क्रम में जब सूक्ष्म

अतींद्रिय शक्तियों द्वारा यह कार्य होता है, तो लोग इसे अस्वाभाविक चमत्कार समझ बैठते हैं, परंतु वह वस्तुतः सहज नियम ही है।

पितर-सत्ताओं में तो यह सामर्थ्य सीमित ही होती है, किंतु इसका यह अर्थ नहीं कि अनीति-अन्याय का विरोध उस एक सीमा तक ही हो सकता है, जो पितरों की सामर्थ्य-सीमा है। अपितु पितर तो छोटे पैमाने पर ही यह भूमिका निभाते हैं। उससे बहुत बड़ी, विस्तृत और विशाल भूमिका देव-सत्ताओं तथा इन सबकी उद्‌गम सर्वोच्च सत्ता की है। धर्म के संरक्षण और अधर्म-अनीति, अनाचार के निवारण की ईश्वरीय प्रक्रिया ब्रह्मांडव्यापी है। वह हर एक देशकाल में चलती रहती है। कभी भी रुकती नहीं।

अन्यायी कौरव भरी सभा में द्रौपदी का चीरहरण करने में तुले थे। उस अनीति का प्रतिकार कोई नहीं कर रहा था। भीष्म, द्रोण जैसे विद्वान् नीतिवेत्ता सिर झुकाए बैठे थे। वह असहाय अबला लुटी जा रही थी। परम सत्ता से यह अन्याय नहीं देखा गया और उसने सहायता कर उसकी लाज बचायी।

दमयंती बीहड़ वन में अकेली थी, व्याध उसका सतीत्व नष्ट करने पर तुला था। सहायक कोई नहीं। उसकी नेत्र ज्योति में से भगवान् प्रकट हुए और व्याध जलकर भस्म हो गया। दमयंती पर कोई आँच नहीं आई। प्रहलाद के लिए उसका पिता ही जान का ग्राहक बना बैठा था, बचकर कहाँ जाए ? खंभे में से नृसिंह भगवान् प्रकट हुए और प्रहलाद की रक्षा हुई। घर से निकाले हुए पांडवों की सहायता करने, उनके घोड़े जोतने भगवान् स्वयं आये। नरसी मेहता की सम्मान रक्षा की तरह ही मानी। ग्राह के मुख से गज के बंधन छुड़ाने के लिए प्रभु नंगे पैरों दौड़े आये थे।

मीरा को विष का प्याला भेजा गया और साँपों का पिटारा, पर वह मरी नहीं। न जाने कौन उनके हलाहल को चूस गया और मीरा जीवित बची रहीं। गाँधी को अनेक सहयोगी मिले और वे दुर्दांत शक्ति से निहत्थे लड़ कर जीते। भगीरथ की तपस्या से

गंगा द्रवित हुई और धरती पर बहने के लिए तैयार हो गई। शिवजी सहयोग देने के लिए आये और गंगा को जटाओं में धारण किया, भगीरथ की साध पूरी हुई। दुर्वासा के शाप से संत्रस्त राजा अंबरीष की सहायता करने भगवान् का चक्र सुदर्शन स्वयं दौड़ा आया, तो समुद्र से टिटहरी के अंडे वापस दिलाने में सहायता करने के लिए भगवान् अगस्त्य मुनि बनकर आए थे।

सनातन सत्ता तो काल गति और ब्रह्मांड से सर्वथा अतीत है, जिस तरह वह प्राचीन काल में थी, आज भी है और उसकी अदृश्य सहायताएँ पूर्व से पश्चिम उत्तर से दक्षिण तक आज भी प्राप्त करते रहते हैं। टंग्स्टन तार पर धन व ऋण विद्युत् धाराओं के अभिव्यक्त होने की तरह यह ईश्वरीय अनुदान जिन दो धाराओं के सम्मिश्रण से किसी भी काल में प्रकट होते रहते हैं, वह श्रद्धा और विश्वास जहाँ कहीं, जब कभी हार्दिक अभिव्यक्ति पाती हैं; परमेश्वर की अदृश्य सहायता वहाँ उभरे बिना नहीं रह सकती।

तात्पर्य यही कि अनीति-अन्याय के प्रतिकार के लिए श्रेष्ठ महामानव और सर्वव्यापी सर्वोच्च सत्ता—दोनों ही समय पर आगे आते हैं। उत्कृष्ट संस्कारों वाली पितर सत्ताएँ भी अपनी सूक्ष्म शक्तियों द्वारा अनीति की राह में बाधा बनकर तथा पीड़ित के पक्ष में वातावरण निर्मित कर एवं आवश्यकतानुसार प्रत्यक्ष और चमत्कारिक रूप से उसकी सहायता कर—उस अन्याय-अनाचार का सामर्थ्यानुसार प्रतिकार करती हैं। इसका तथ्य यह है कि प्रत्येक सन्मार्गगामी को सदा साहसपूर्वक अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते रहना चाहिए, साथ ही अदृश्य सत्ताओं के प्रति सदैव श्रद्धा-भाव दृढ़ रखना चाहिए। इन अदृश्य—सत्ताओं में पितर, देव जैसी सूक्ष्म शक्तियाँ भी आती हैं और सर्वोच्च ब्रह्म सत्ता तो अदृश्य होते हुए भी सर्वव्यापी है ही।

❑❑

पितर : अदृश्य सहायक

आइंस्टाइन कहते हैं—"पदार्थ की सूक्ष्मतर सत्ता तक जब मेरी कल्पना और अनुभव शक्ति पहुँच जाती है तो मुझे यह विश्वास-सा होने लगता है कि वहाँ पहले से ही कोई विचार और परिवर्तन करने वाली चेतन सत्ता विद्यमान है। मैंने तो केवल उसके साथ एकाकार किया है। अब मुझे विश्वास होने लगा है कि यह कोई अदृश्य जगत् की सूक्ष्म किंतु महान् शक्तिशाली सत्ता है।"

आध्यात्मिकता का उद्देश्य भी परमात्मा अथवा विश्व की किसी महान् रक्षा करने वाली शक्ति के साथ जोड़ना है। ब्रह्मांड का अस्तित्व और इसका सत्य, जिसके अंतर्गत संभवतः लाखों विश्व हैं, जिनका कोई अंत नहीं है, हमारी इंद्रियों और बुद्धि के अनुभव की वस्तु है। ऊपर से देखने पर तो यह पता चलता है कि ब्रह्मांड अव्यवस्थित है, पर जब सूर्य, चंद्रमा, मंगल, बुध, हर्शल, प्लूटो और अन्य ग्रह-नक्षत्रों की गतिविधियों पर दृष्टि दौड़ाते हैं तो लगता है, सब कुछ व्यवस्था और नियम के अंतर्गत चल रहा है, जिससे स्पष्ट पता चलता है कि सबको जोड़ने वाली एक शक्ति है, जो प्रकृति अथवा बुद्धि का कोई अंश नहीं है वरन् वह नितांत स्वतंत्र, निर्लिप्त एवं बंधन-मुक्त है।

मनुष्य में स्वयं भी उसी शक्ति का प्रकाश विद्यमान है, किंतु वह मांस-मज्जा की कारा में बँधकर अपने को उन्हीं से जुड़े संवेदनों तक सीमित मान बैठता है। जैसा कि श्री सी० डब्लू० लेडबीटर ने "इनविजिबल हेल्पर्स" में लिखा है—उच्चतर लोकों में क्रियाशील अशरीरी पितर-सत्ताएँ जब मनुष्यों को देखती हैं, तो वे उन्हें अस्थि-मांस के पिंड में कैद हो गया देखकर दुःखी भी होती हैं, करुणाभिभूत भी। सामान्य जन मृत व्यक्ति को सुख-आनंद से वंचित हो गया मान बैठता है, जबकि वे सत्ताएँ देखती हैं कि अपनी संकीर्णताओं में घिरा शरीरधारी मानव ही सहज आनंद से वंचित है। ऐसे वंचितों में से जो भी आनंदपूर्ण प्रकाश की दिशा में बढ़ते हैं

या जिनमें भी बढ़ने की संभावना होती है अथवा जो कषाय-कल्मषों से अधिक लिप्त नहीं होते, उनको सहायता देने के लिए पितर-सत्ताएँ सदैव जागरूक रहती हैं।

निर्दोष बच्चों तथा सज्जन वृत्ति के लोगों को संकट के समय में ये पितर-सत्ताएँ, आकस्मिक सहायता प्रदान करती हैं और विपत्तियों के पहाड़ के नीचे दबने पर भी उनका बाल-बाँका नहीं होता।

इन पितर-सत्ताओं की करुणा और शक्ति के परिचय-प्रमाण देने वाली घटनाएँ आये दिन बड़ी संख्या में देखी-सुनी जाती हैं।

श्री लेडबीटर ने अपनी उपरोक्त पुस्तक में ऐसे अनेक उदाहरण और अनुभव प्रस्तुत किए हैं—

"एक बार लंदन की हालबर्न सड़क में भयंकर आग लग गई है। उसमें दो मकान जलकर राख हो गये। उस घर में एक बुढ़िया को जो धुँए के कारण दम घुट जाने से पहले ही मर गई थी, छोड़कर शेष सबको बचा लिया गया। आग इतनी भयंकर लगी थी कि कोई भी सामान नहीं निकाला जा सका।"

"जिस समय दोनों मकान लगभग पूरे जल चुके थे, तब घर की मालकिन को याद आया कि उसकी एक मित्र अपने बच्चे को एक रात के लिए उसके पास छोड़कर किसी कार्यवश कालचेस्टर चली गई थी। वह बच्चा अटारी पर सुलाया गया था और वह स्थान इस समय पूरी तरह आग की लपटों से घिरा हुआ था, आग की गर्मी से उस समय पत्थर भी मोम की तरह पिघलकर टपक रहे थे।"

"ऐसी स्थिति में बच्चे के जीवन की आशा करना ही व्यर्थ था, फिर उसकी खोज करने कौन जाता, पर एक आग बुझाने वाले ने साहस साधा, उपकरण बाँधे और उस कमरे में जा पहुँचा, जहाँ बच्चा लिटाया गया था। उस समय तक फर्श का बहुत भाग जल कर गिर गया था, किंतु आग कमरे में गोलाई खाकर अस्वाभाविक

और समझ में न आने वाले ढंग से खिड़की की तरफ निकल गई थी। उस गोल सुरक्षित स्थान में बच्चा ऐसे लेटा था, जैसे कोई अपनी माँ की गोद में लेटा हो। बाहर का दृश्य देखकर वह भयभीत अवश्य था, पर उसकी तरफ एक भी आग की चिनगारी बढ़ने का साहस न कर रही थी। जिस कोने पर बच्चा सोया था, वह बिल्कुल बच गया था। जिस पटिये पर खाट थी, वह आधे-आधे जल गये थे, पर चारपाई के आस-पास कोई आग न थी, वरन् एक प्रकार का दिव्य तेज वहाँ भर रहा था। जब तक आग बुझाने वाले ने बच्चे को सकुशल उठा नहीं लिया, वह प्रकाश अपनी दिव्य प्रभा बिखराता रहा, पर जैसे ही वह बच्चे को लेकर पीछे मुड़ा कि आग वहाँ भी फैल गई और दिव्य तेज अदृश्य हो गया।"

बर्किंघम शायर में बर्नहालवीयो के निकट हुई, एक घटना में इस तरह का दैवी हस्तक्षेप लगभग एक घंटे तक दृश्यमान् रहा। एक किसान अपने खेत पर काम कर रहा था। उसके दो छोटे-छोटे बच्चे भी थे, जो पेड़ के नीचे छाया में खेल रहे थे। किसान को ध्यान रहा नहीं, दोनों बालक खेलते-खेलते जंगल में दूर तक चले गये और रात्रि के अँधेरे में भटक गये।

इधर किसान जब घर पहुँचा और बच्चे न दिखाई दिये, तो चारों तरफ खोज हुई। परिवार और पड़ौस के अनेक लोग उस खेत के पास गये, जहाँ से बच्चे खोये थे। वहाँ जाकर सब देखते हैं कि दीप-शिखा के आकार का एक अत्यंत दिव्य नीला प्रकाश बिना किसी माध्यम के जल रहा है, फिर वह प्रकाश सड़क की ओर बढ़ा। यह लोग उसके पीछे अनुसरण करते चले गये। प्रकाश मंदगति से चलता हुआ उस जंगल में प्रविष्ट हुआ, जहाँ एक वृक्ष के नीचे दोनों बच्चे सकुशल सोये हुए थे। माँ-बाप ने जैसे बच्चों को गोदी से उठाया कि प्रकाश अदृश्य हो गया।

दैनिक 'हिंदुस्तान' में छपी एक घटना इस प्रकार है—

"जबलपुर। भक्त प्रहलाद के काल में घटी उस घटना की पुनरावृत्ति इस कलियुग में हुई, जिसमें कुम्हार के जलते हुए भट्ठे

में ईश्वर ने बिल्ली और उसके बच्चों की रक्षा की थी। अंतर केवल यह था कि वे बिल्ली के बच्चे थे और इस बार चिड़िया के अंडे। पन्ना जिले के धर्मपुर स्थान में कच्ची ईंटों को पकाने के लिए एक बड़ा भट्ठा लगाया गया। भट्ठे को जिस समय बंद किया गया और आग लगाई गई, किसी को पता नहीं चला कि ईंटों के बीच एक चिड़िया ने घोंसला बनाया है और उसमें अपने अंडे सेये हैं। एक सप्ताह तक भट्ठा जलता रहा और ईंटें आँच में पकती रहीं, आठवें दिन जैसे ही भट्ठा खोला गया, एक चिड़िया उड़कर बाहर निकल भागी। बाद में पाया कि उस स्थान पर जहाँ घोंसला था, आग पहुँची ही नहीं। वहाँ की ईंटें कच्ची थीं। यह घटना देखकर वहाँ के प्रत्यक्ष-दर्शियों को विश्वास करना पड़ा कि अदृश्य सत्ताओं का अस्तित्व है।"

☆ मात्र संयोग ही नहीं

बिहार में एक बार जोरदार भूकंप आया। कई दिन तक रह-रहकर पृथ्वी काँपी और जब स्थिर हुई, तब पता चला कि नगर के नगर ध्वस्त हो चुके हैं। हजारों व्यक्तियों की जानें गईं इस दुर्घटना में। मुंगेर नगर में उस दिन बाजार था। दोपहर का समय था हजारों व्यक्ति क्रय-विक्रय करने में तल्लीन थे, तभी आया भूचाल और उन हजारों दुकानदारों तथा खरीददारों को मकानों के मलबे में दाब कर चला गया।

पीछे आये सहायता दल सिपाही-सैनिक और समाजसेवी संस्थाएँ। मलबे की खुदाई प्रारंभ हुई। एक-दो दिन तक तो कुछ लोग जीवित कुछ चोट खाये निकलते रहे, पर तीसरे दिन जो लाशें निकलनीं शुरू हुई तो फिर पंद्रह दिन तक लाशें ही निकलती रहीं ढेर लग गया मृतकों का।

गिरे हुए मकानों का मलबा निकालने का काम अभी तक बराबर चल रहा था। एक स्थान पर काम चल रहा था, एकाएक कुछ लोग चौंके; क्योंकि नीचे से आवाज आ रही थी—'थोड़ा धीरे

से खोदना। १५ दिन तक जमीन में दबे रहने पर भी यह कौन जीवित गड़ा है ? इस आश्चर्य और विस्मय से सभी का मन भर गया। सावधानी से मिट्टी हटाई जाने लगी।'

कई बड़ी-बड़ी धत्रियाँ तथा शहतीरें निकालने के बाद निकला, एक अधेड़ आयु का व्यक्ति—केले के छिलकों में पड़ा हुआ, एक भी चोट या खरोंच नहीं थी उसे ! सबसे आश्चर्य भरी बात तो यह थी कि ढेर सारी मिट्टी और तखतों के नीचे दबे उस आदमी ने बिना खाये-पिये, साँस लिए १५ दिन कैसे काट दिये ?

उसी से पूछा गया—भाई तुम कैसे बच निकले ? तो उसने आप बीती घटना इस प्रकार सुनाई—

"मैं आया था—केले बेचने, इस मकान की दालान के सिर नीचे पर टोकरी रखे खड़ा था कि भूचाल आ गया। छत टूटकर ऊपर आ गिरी, मैं दब गया, टोकरी कुछ इस प्रकार उल्टी कि सारे केले उसके नीचे आ गये और इस तरह के पिचकने या सड़ने-गलने से बच गये। इसी में से निकाल-निकालकर केले खाता रहा।"

पेट के नीचे का भाग कुछ इस तरह मिट्टी से पट गया कि शिरोभाग से कमर भाग का संबंध ही टूट गया। टट्टी-पेशाब की बदबू से इस प्रकार बचाव हो गया।"

"एक बार पृथ्वी फिर हिली और उसके साथ ही हिला यह मलबा, न जाने कैसे एक सूराख हो गया ? वह हल्की-सी धूप की गर्मी भी देता रहा और शुद्ध हवा भी। अब जीते रहने के लिए एक ही वस्तु आवश्यक रह गई थी, वह थी पानी। दैवयोग से पृथ्वी तिबारा काँपी, तब इस दुकान का फर्श टूटा और उसके साथ ही पानी की एक लहर इधर आ गई और इस गड्ढे को पानी से ऊपर तक भर गई। हवा और धूप यों छेद से मिल गये। केले पास थे ही, पानी भी परमात्मा ने भेज दिया। यह सब व्यवस्थाएँ भगवान् ने जुटा दीं तो मुझे विश्वास हो गया कि मुझे अभी नहीं मरना।"

"इसी विश्वास के सहारे आज तक जीवित रहा। आज का दिन आखिरी दिन है, जबकि सब केले समाप्त हो गये हैं, पानी नहीं बचा है, रोशनी भी नहीं आ रही थी, पर आप सब लोग आ गये, सो मैं आप लोगों को भगवान् की मदद ही मानता हूँ।" इतना कहकर उसने कृतज्ञता की दो बूँद आँखों से लुढ़का दीं।

इस घटना का वर्णन महात्मा आनंद स्वामी ने 'एक ही रास्ता' पुस्तक में किया है। इस तरह की घटनाएँ बताती हैं कि अदृश्य सत्ताएँ सत्पुरुषों और पीड़ितों की मदद के लिए सदैव आगे आती हैं।

वेल्स की मुख्य सड़क से २२ वर्षीया युवती पैपिटा हैरिसन अपने पिता के जन्म-दिवस समारोह में भाग लेने लंदन जा रही थी। अचानक कार एक बर्फ की चट्टान से टकरा गई, फिर एक दीवार तोड़कर एक खेत में घुस गई। दुर्भाग्य से खेत ढलान पर था, कार वहाँ से लुढ़की और ८० फुट नीचे नदी में जा गिरी। दुर्भाग्य ने वहाँ भी पीछा न छोड़ा, नदी में पास ही २० फुट गहरा जल प्रपात था, कार उसमें जा गिरी, इस बीच वह डूबने से बचने के लिए प्रयत्न करने लगी तो ऐसा जान पड़ा, किसी ने हाथ पकड़कर ऊपर उठा लिया हो। वह बाहर निकल आई।

सन् १८७४ की बात है। इंग्लैंड का एक जहाज धर्म प्रचार के सिलसिले में न्यूजीलैंड के लिए रवाना हुआ। उसमें २१४ यात्री थे। वह विस्के की खाड़ी से बाहर ही निकला था कि जहाज के पेंदे में छेद हो गया। मल्लाहों के पास जो पंप थे तथा दूसरे साधन थे, उन सभी को लगाकर पानी निकालने का भरपूर प्रयत्न किया, पर जितना पानी निकलता था, उससे भरने की गति तीन गुनी तेज थी।

निराशा का वातावरण बढ़ता जाता था। जब जहाज डूबने की बात निश्चित हो गई तो कप्तान ने सभी यात्रियों को छोटी लाइफ बोटों में उतर जाने और उन्हें खेकर, कहीं किनारे पर जा लगने का आदेश दे दिया। डूबते जहाज में से जो जानें बचाई जा सकती हों, उन्हें ही बचा लिया जाए। अब इसी की तैयारी हो रही थी।

तभी अचानक पंपों पर काम करने वाले आदमी हर्षातिरेक से चिल्लाने लगे। उन्होंने आवाज लगाई कि जहाज में पानी आना बंद हो गया। अब डरने की कोई जरूरत नहीं रही। यात्रियों ने चैन की साँस ली और जहाज आगे चल पड़ा। काल्पर्स डाक बंदरगाह पर उस जहाज की मरम्मत कराई गई, तब पता चला कि उस छेद में एक दैत्याकार मछली की पूँछ फँसकर इतनी कस गई थी कि न केवल छेद ही बंद हुआ वरन् मछली भी घिसटती हुई साथ चली आई।

इस घटना से ऐसा लगता है कि ईसाई धर्म को मानने वाली किन्हीं पितर सत्ताओं ने ही यह विलक्षण सहायता पहुँचाई होगी।

कई बार ऊपर से दीखने वाली विपत्ति के पीछे भी दिव्य अनुग्रह छिपा रहता है। तात्कालिक हानि कालांतर में हानि उठाने वालों को भी सुखद सिद्ध होती है और साथ ही दूसरों का भी उससे भला होता है। इसलिये प्रत्येक हानि को दुर्भाग्य सूचक या दैवी कोप ही नहीं मान लेना चाहिए।

लीसवे का समुद्री प्रकाश स्तंभ आजकल जहाँ खड़ा है, वहाँ किसी जमाने में जहाजों के लिए भारी खतरा था। उस उथलेपन में फँसकर अनेकों जलयान या तो नष्ट हो जाते थे या क्षतिग्रस्त। उस स्थान पर प्रकाश स्तंभ खड़ा करना भी संभव नहीं हो रहा था, क्योंकि वहाँ की जमीन बालू की थी।

सन् १७७१ में एक जहाजी दुर्घटना हुई। एक रुई से लदा अमेरिकी जहाज—दुर्भाग्य का शिकार होकर, उसी दलदल में फँसकर नष्ट हो गया। कुछ विचित्र संयोग ऐसा हुआ कि रुई, बालू और उस जल के विचित्र सम्मिश्रण से वह रुई पत्थर जैसी कठोर हो गई। फलस्वरूप उसी की नींव पर प्रकाश स्तंभ खड़ा किया गया, जिससे भविष्य में उस क्षेत्र में जहाज नष्ट होने की आशंका समाप्त हो गई। उस एक जहाज के डूबने से जो प्रकाश स्तंभ बना, उसके कारण अमेरिकी जहाज भविष्य के लिए उस तरह की दुर्घटना के शिकार होने से सदा के लिए बच गये और अन्य यानों

को भी उस तरह के संकट से छुटकारा मिल गया। अभिशाप को वरदान में बदलने वाली दुर्घटना यह आशा दिलाती है कि किसी अनिष्ट के पीछे मंगल भी छिपा हो सकता है।

बहुत संभव है कि उदार अशरीरी आत्माओं ने ही दुर्घटनाग्रस्त जलयानों की क्षति से लोगों को बचाने के लिए इस रीति से रास्ता बनाया हो।

एक भारवाहक उच्छृंखल गधा एक रात चुपके से घर से खिसक गया। उसके मालिकों ने उसे कई दिन ढूँढ़ने के बाद मुश्किल से एक जगह खड़ा पाया। अमेरिका की इट्टाही पहाड़ियों की जिस सुरम्य घाटी में यह गधा खड़ा था, वहाँ कुछ देर सुस्ताने के बाद उसके मालिक रुके और वे लोग उसे घर ले चलने के लिए घसीटने लगे, पीटा भी पर वह अड़ियल बनकर खड़ा हो गया और लौटने से इनकार करने लगा।

मालिकों ने ध्यान से देखा तो दीखा कि वहाँ रजत सीसिया धातु की बहुत बड़ी खान है। इस पहाड़ी पर उन्होंने कब्जा कर लिया, इन दिनों के अमेरिकी कानून के अनुसार खाली जगह पर कब्जा करने वाले ही उसके मालिक हो जाते थे। कब्जा होने के बाद मालिकों की सरकारी स्वीकृति के लिए अर्जी दी गई। सन् १८६५ में इस प्रकार की अर्जियों की सुनवाई करने वाले इदाही अदालत के न्यायाधीश श्री नार्मन वक ने सारी कथा ध्यानपूर्वक सुनी और उपरोक्त दोनों व्यक्तियो को कब्जा देते हुए अपने फैसले में यह भी लिखा कि इस खान का असली शोधकर्ता और कब्जा करने वाला वह गधा है, इसलिए आमदनी के एक बड़े अंश का अधिकारी वह गधा है।

यह स्थान आज वंकर पहाड़ी तथा सुल्ली खान के नाम से प्रसिद्ध है। इसकी संपत्ति अब ४३ अरब डालर से भी अधिक है। अड़ियल गधा अपने शोध उपहार की आमदनी का एक बड़ा अश प्राप्त करता रहा।

इस कंपनी के मालिकों ने गधे के नाम की संपत्ति को परमार्थ प्रयोजनों के लिए सुरक्षित रखा और उससे वहाँ कितने ही लोकोपयोगी कार्यों की नींव डाली गई। अदृश्य सहायता का ऐसा ही सदुपयोग होना भी चाहिए।

☆ अदृश्य सत्ताओं द्वारा चिकित्सा-सहायता हेतु मार्गदर्शन

फिलीपीन में एक आश्चर्यजनक चिकित्सक हुआ है—टोनी सपगोआ। उसकी चिकित्सा प्रणाली इस युग के चिकित्साशास्त्रियों को अचरज में डालती है। वे उसे देखने जाते थे। उसकी प्रणाली देखते थे, तो चकित रह जाते थे, पर समझ नहीं पाते कि उसका कारण क्या है और यह सब कैसे संभव होता है ?

वह युवा तांत्रिक टोनी चिकित्सा व्यवसाय करता था। मुख्य रूप से वह शल्य चिकित्सक था। ट्यूमर, कैंसर, मोतियाबिंद के आपरेशन करता था और विकृत अवयव शरीर में से निकालकर बाहर रख देता था। उसके पास न चाकू होता, न कैंची, न सुई फिर भी आपरेशन करते रहना एक अद्‌भुत काम होता। जो जादू जैसा प्रतीत होता था।

टोनी क्लेजन के कुवाओं इलाके में दो मंजिली मकान में रहता था। ऊपर अपने परिवार सहित खुद रहता था। नीचे उसका अस्पताल था। विभिन्न रोगों से ग्रस्त आपरेशन योग्य रोगी ही उसके पास आते थे। उन्हें वह एक मेज पर लिटाता था, मंत्र पढ़ता था। चाकू का काम उसका हाथ ही करता था। काटने-फाड़ने, चीरने की क्रिया वह उँगली से करता था। ट्यूमर, कैंसर, गाँठ, मवाद आदि को भीतर से निकालकर बाहर रख देता था। इसके बाद वह बिना सुई के घाव को जोड़ देता था। इस बीच उसका चचेरा भाई एल्फ्रेडो उसके साथ रहता था और तौलिया देने, चीजें उठाने जैसे काम करता रहता था। थोड़ा खून तो निकलते देखा जाता था, पर रोगी को दर्द जरा भी नहीं होता

और आपरेशन ठीक प्रकार संपन्न हो जाता था। प्रतिदिन ऐसे १० से लेकर बीस तक आपरेशन उसे करने पड़ते थे।

रोगियों की, प्रशंसकों की भारी भीड़ उसे घेरे रहती थी। पहले वह फिलीपीन की राजधानी मनीला में रहता था। ख्याति के साथ-साथ भीड़ बढ़ी तो उसने वह स्थान छोड़ दिया। नई जगह में उसने नाम का बोर्ड आदि कुछ नहीं लगाया तो भी लोगों ने पता वहाँ पर लगा लिया और रोगी वहाँ भी पहुँचने लगे। जो आधुनिक आपरेशनों से संभव है, वह कर देने का दावा टोनी भी करता था। उसकी चिकित्सा विधि देखने डॉक्टर-वैज्ञानिक आते थे और सारे क्रिया-कृत्य के फोटो फिल्म ले जाते थे, पर इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाते कि यह असंभव दीखने वाली बात संभव कैसे हो पाती है।

टोनी सपगोआ अपने इस कार्य का श्रेय किसी देवता को देता था। कहता था—उसका 'अद्भुत रक्षक' जो कराता है वह वही करता है। आपरेशनों में वही उसके साथ रहता है और सहायता करता है। इसके अतिरिक्त उस देवता के बारे में कुछ अधिक नहीं बताता।

मियामी फ्लोरिडा के वेल्क पेरा साइकॉलोजी रिसर्च फाउंडेशन के प्रतिनिधि डॉ० वनर्जी वहाँ गये। यह सब देखा—क्रियाकलाप के फोटो भी लाये, पर इस निष्कर्ष पर न पहुँच सके कि यह सब कैसे और क्यों कर संभव होता है ?

☆ अंध-विश्वास कहकर अवहेलना न करें, श्रद्धा-कृतज्ञता भी जीवित रखें

अंध-विश्वास की मोटी परिभाषा है—बिना प्रमाण युक्त कारणों के किन्हीं मान्यताओं को स्वीकार कर लेना। इस संदर्भ में मनीषियों के अन्यान्य प्रतिपादन भी हैं। रायल इंस्टीट्यूट ऑफ लंदन में विज्ञान और अंध-विश्वास विषय पर अपना निबंध पढ़ते हुए रेवेंडर चार्ल्स किंग्सले ने उसे 'अज्ञात का भय' सिद्ध किया।

उनका मतलब शायद उन देवी-देवताओं या भूत-प्रेतों से था, जो भेंट-पूजा ऐंठने के लिए डराने, धमकाने और आतंकित करने वाले माने जाते हैं। पर उनका यह प्रतिपादन भी एकाकी था। प्राचीन यूनान में प्रत्येक नदी, वृक्ष, पर्वत आदि में देवात्मा मानी जाती थी और उससे मात्र शुभ-कामना की आशा की जाती थी। यह आत्माएँ डराती नहीं, वरन् स्नेह, सहयोग प्रदान करती हैं। यूनानियों की देव-मान्यता अंध-विश्वास कही जा सकती है, पर उसका कारण 'अज्ञात का भय' नहीं माना जा सकता।

नेशनल कॉलेज आयरलैंड के प्राध्यापक सर वैरेट ने कार्य और कारण की संगति बिठाये बिना किन्हीं मान्यताओं को अपना लेना अंध-विश्वास बताया है। इस परिधि में अनेकानेक धार्मिक प्रचलन और कथा-पुराणों में बताये हुए संदर्भ भी आ जाते हैं। शकुन एवं मुहूर्त भी इसी वर्ग के हैं। छींक हो जाने को काम बिगड़ने की सूचना मानना यद्यपि बहुत प्रचलित मान्यता है, पर खोजने पर ऐसा कोई कारण समझ में नहीं आता, जिसमें छींक आने और काम बिगड़ने की परस्पर संगति बिठाई जा सके।

भूतकालीन मान्यताओं को यदि तथ्यपूर्ण नहीं सिद्ध किया जा सके तो उन्हें अग्राह्य ठहरा देना चाहिए। इस सिद्धांत पर इन दिनों बुद्धिजीवी वर्ग का बहुत जोर है। इतने पर भी यह नहीं कहा जा सकता कि जो तथ्य आज उपलब्ध हैं, वे ही अंतिम हैं, आगे ऐसे आधार प्रस्तुत नहीं होंगे जिनसे आज अंध-विश्वास समझी जाने वाली बातें कल तथ्यपूर्ण सिद्ध हो सकें। तर्क, विवेक, कारण और प्रमाणों को उचित महत्त्व दिया जाना चाहिए, पर चिंतन में यह गुंजायश भी छोड़ी जानी चाहिए कि शोध की प्रगति किन्हीं भूतकालीन मान्यताओं को सही भी सिद्ध कर सकती है। उचित यही है कि हम प्रमाणित सिद्धांतों को स्वीकार करते हुए मस्तिष्क को इसके लिए खुला हुआ रखें कि अतीत की अध्यात्म संबंधी मान्यताओं की भविष्य में सही सिद्ध हो सकने की संभावना है। सामाजिक कुरीतियों के रूप में जो हानिकारक प्रचलन हैं, उन्हें

निःसंकोच हटाया जाए, पर अध्यात्म मान्यताओं के संबंध में उतावली न बरती जाए। तत्त्वदर्शी ऋषियों के अनुभव सहज ही उपहासास्पद नहीं ठहरा दिये जाने चाहिए और उन्हें तत्काल अंध-विश्वासों की श्रेणी में नहीं गिन लेना चाहिए।

पिछले दिनों योग संबंधी प्राचीन मान्यताओं को अप्रामाणिक ठहराने वालों को अपनी बात पर पुनर्विचार करना पड़ा है और अत्युत्साही खंडन प्रवृत्ति से पीछे हटना पड़ा है।

डॉ० मेस्मर की मेस्मरिज्म और जेम्स ब्रेयड की हिप्नोटिज्म जब प्रयोगशाला में सही सिद्ध होने लगी, तब उस आधार पर रोगियों को बेहोश करके, आपरेशन किये जाने लगे और अचेतन मस्तिष्क का चमत्कारी उपयोग किया जाने लगा तो योग की इन शाखाओं को मान्यता मिली और समझा जाने लगा कि मानवी विद्युत् से संबंधित अन्य प्रतिपादनों में भी तथ्य हो सकता है और वे अगले दिनों प्रमाणित ठहराये जा सकते हैं।

क्लौरिंगटन ने 'ईविल आई' सिद्धांत के अनुसार यह सिद्ध किया है कि नेत्रों में वेधक दृष्टि होती है और उसे विशेष उपायों से समुन्नत करके, दूसरों को अच्छे या बुरे प्रभाव के अंतर्गत लाया जा सकता है। यह सिद्धांत लगभग उसी स्तर का है जिसके अनुसार 'नजर लगने' की पुरानी मान्यता को अंध-विश्वास ठहरा दिया गया है।

चार्ल्स वाइविन ने इच्छा शक्ति एवं एकाग्रता की शक्ति को जादुई चमत्कारों से लेकर शारीरिक, मानसिक रोगों की निवृत्ति तक के लिए प्रयुक्त करके दिखाया और बताया है कि यह शक्ति मानवी क्षमताओं में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इसके प्रयोग से व्यक्तित्व को प्रतिभाशाली बनाने की दिशा में आशातीत सफलता पाई जा सकती है और अपने में ऐसी विशेषताएँ उत्पन्न कर सकते हैं, जिन्हें अद्भुत कहा जा सके। इस संदर्भ में उनके प्रयोगों ने दर्शकों को चकित कर दिया है। यह मंत्र शक्ति के संबंध में कहे जाने वाले चमत्कारी वर्णनों की पुनरावृत्ति है।

सोसाइटी फॉर साइकिकल रिसर्च के अध्यक्ष जी० एन० टीरेल ने अपनी खोजों में ऐसे प्रमाणों के पहाड़ लगा दिये हैं, जिनमें प्रेतात्माओं के अस्तित्व एवं क्रियाकलाप के लगभग वैसे ही प्रमाण मिले हैं; जैसे कि जीवित मनुष्यों के होते हैं। ठीक इसी प्रकार की शोधें स्प्रिचुअल सोसाइटी ऑफ ब्रिटेन की हैं, उसके संचालक भी अपनी संग्रहीत प्रमाण सामग्री में प्रेतात्माओं के अस्तित्व को इस प्रकार सिद्ध करते हैं, जिससे अविश्वासियों को भी विश्वास करने के लिए बाध्य होना पड़े। यह प्रतिपादन प्रायः उन्हीं बातों को पुष्ट करता है, जिन्हें बताने के कारण झाड़-फूँक करने वाले ओझा लोगों को अथवा भूत-प्रेत की बातें करने वालों को अंध-विश्वासी कहा जाता रहा है।

स्वप्नों के मिथ्या होने की बात बुद्धिजीवी वर्ग में कही जाती रही है। पर जब कितने ही उदाहरण ऐसे मिलते हैं, जिनमें स्वप्न में देखी गई बात यथार्थ निकली अथवा स्वप्न में मिली सूचना भविष्य-कथन बनकर सामने आई तथा परामनोविज्ञान के विश्लेषणकर्ताओं को मनुष्य की अतींद्रिय शक्ति का स्वप्नों के साथ एक सीमा तक घुला रहने की बात स्वीकार करनी पड़ी। स्वप्न फल बताने वालों को अंध-विश्वासी ही कहा जाता रहे, आज के प्रस्तुत प्रमाणों को देखते हुए यह बात न्यायसंगत प्रतीत नहीं होती।

मेंटल टेलीपैथी—क्लेयर वायन्स आदि ऐसी अध्यात्म विधा सामने आती जा रही हैं, जो भूतकालीन चमत्कारवाद की सत्यता मानने के लिए फिर वापस लौट चलने का निमंत्रण देती हैं। मेटा फिजिक्स विज्ञान का जिस क्रम से विकास हो रहा है, उसे देखते हुए लगता है, वह दिन बहुत दूर नहीं रह गया जब मस्तिष्क विद्या हमें प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि जैसे योगाभ्यासों को न केवल सही आधार पर विनिर्मित सिद्ध करेगी, वरन् यह भी बतायेगी कि उपासना, साधना की पद्धतियाँ जीवन के अंतरंग और बहिरंग दोनों पक्षों के विकास में उपयोगी है और सहायक भी।

ऐसी दशा में हमें अंध-विश्वासों की सीमा निर्धारित करते हुए प्राचीन आध्यात्मिक मान्यताओं के संबंध में थोड़ा उदार दृष्टिकोण ही रखना चाहिए और विज्ञान बुद्धि द्वारा यथार्थता तक पहुँचने के लिए जितनी प्रतीक्षा की आवश्यकता है, उसे बिना उतावली के पूरी होने देना चाहिए।

अदृश्य शक्तियों, उदार पितरों, देव—सत्ताओं और प्रजापतियों द्वारा सहयोग—मार्गदर्शन दे सकना भी ऐसा ही एक सत्य है। प्राचीन आध्यात्मिक मान्यताओं में से यह भी एक है और पूर्णतः वास्तविक है, अंध-विश्वास नहीं। उसे अंध-विश्वास मान बैठना हठवादिता तो है ही, अकृतज्ञता भी है। अपने अदृश्य सहायकों के प्रति गहन श्रद्धा-भाव की आवश्यकता है, न कि प्रामाणिक घटनाक्रमों एवं तथ्यों की अवहेलना करने की।

❐❐

पितरों को श्रद्धा दें, वे शक्ति देंगे

प्राणियों का शास्त्रीय वर्गीकरण शरीरधारी और अशरीरी दो भागों में किया गया है। अशरीरी वर्ग में—(१) पितर ,(२) मुक्त, (३) देव, (४) प्रजापति हैं। शरीरधारियों में—(१) उद्‌भिज, (२) स्वेदज, (३) अंडज, (४) जरायुज हैं।

चौरासी लाख योनियाँ शरीरधारियों की हैं। वे स्थूल जगत् में रहती हैं और आँखों से देखी जा सकती हैं। दिव्य जीव जो आँखों से नहीं देखे जा सकते हैं, उनका शरीर दिव्य होता है। वे सूक्ष्म जगत् में रहते हैं। इनकी गणना तत्त्वदर्शी मनीषियों ने अपने समय में ३३ कोटि की थी। तेंतीस कोटि का अर्थ उनके स्तर के अनुरूप तेंतीस वर्गों में विभाजित किये जा सकने योग्य भी होता है। कोटि का अर्थ वर्ग या स्तर होता है। दूसरा अर्थ है—करोड़। इस प्रकार यह भी कहा जा सकता है कि उस दिव्य सत्ताधारियों की गणना तेंतीस करोड़ की संख्या में सूक्ष्मदर्शियों ने की होगी। जो हो उनका अस्तित्व है—कारण और प्रभाव भी।

जीवों के विकास क्रम को देखने से पता चलता है कि कितनी ही प्राचीन जीव-जातियाँ लुप्त होती हैं और कितने ही नये प्रकार के जीवधारी अस्तित्व में आते हैं। फिर देश-काल के प्रभाव से भी उनकी आकृति-प्रकृति इतनी बदलती रहती है कि एक वर्ग को ही अनेक वर्गों का माना जा सके। फिर कितने ही जीव ऐसे हैं, जिन्हें अनादि काल से जनसंपर्क से दूर अज्ञात क्षेत्रों में ही रहना पड़ा है और उनके संबंध में मनुष्य की जानकारी नहीं के बराबर है। कुछ प्राणी ऐसे हैं, जो खुली आँखों से नहीं देखे जा सकते। सूक्ष्मदर्शी यंत्रों से ही उन्हें हमारी आँखें देख सकती हैं। इतने छोटे होने पर भी उनका जीवन-क्रम अन्य शरीरधारियों से मिलता-जुलता ही चलता रहता है।

अपनी पृथ्वी बहुत बड़ी है, उस पर रहने वाले जलचर-थलचर-नभचर कितने होंगे, इसकी सही गणना कर सकना

स्थूल बुद्धि और मोटे ज्ञान-साधनों से संभव नहीं हो सकती, केवल मोटा अनुमान ही लगाया जा सकता है, पर सूक्ष्मदर्शियों के असाधारण एवं अतींद्रिय ज्ञान से साधारणतया अविज्ञात समझी जाने वाली बातें भी ज्ञात हो सकती हैं। ऋषियों की सूक्ष्म दृष्टि ने अपने समय में जो गणना की होगी, उसे अविश्वसनीय ठहराने का कोई कारण नहीं, जबकि जीवशास्त्रियों की अद्यावधि खोज ने भी लगभग उतनी ही योनियाँ गिन ली हैं। इसमें कुछ ही लाख की कमी है, जो शोध प्रयास जारी रहने पर नवीन उपलब्धियों के अनवरत् सिलसिले को देखते हुए कुछ ही समय में पूरी हो सकती है।

देखे-पहचाने जा सकने योग्य इन शरीरधारियों को मनीषियों ने चार भागों में विभक्त किया है—(१) उद्भिज, (२) स्वेदज, (३) अंडज (४) जरायुज।

उद्भिज वर्ग में पेड़-पौधे, लता-गुल्म, घास, अन्न, जड़ी-बूटियाँ आदि की गणना की जाती है। स्वेदज का मोटा अर्थ तो पसीने से उत्पन्न होने वाले "जूँ" आदि का नाम लिया जाता है, पर वस्तुतः यह शब्द मेरुदंड रहित प्राणियों के लिए प्रयुक्त होता है, कीट-पतंग, मक्खी, मच्छर, टिड्डी, तितली आदि इसी वर्ग में आते हैं। अंडज वे हैं, जो अपने शरीर से अंडा ही उत्पन्न कर सकते हैं। बच्चा उनके शरीर में नहीं पलता, वरन् अंडे में विकसित होता और उसी को फोड़ कर शरीरधारी बनता है। इस वर्ग में मछलियाँ, पक्षी, रेंगने वाले कीड़े आदि आते हैं। चौथे जरायुज जिन्हें पिंडज भी कहते हैं, वे जो माता के साथ नाल तंतु से बँधे हुए उत्पन्न होते हैं। जन्म के समय ही जिनकी आकृति अपने जन्मदाताओं के अनुरूप होती है। मनुष्य और पशु इसी श्रेणी में गिने जा सकते हैं। यों स्वेदजों में से भी अधिकांश अंडज ही होते हैं, पर उन्हें पृथक् रीढ़रहित या रीढ़सहित होने के कारण पृथक् वर्ग का गिना गया है।

शरीरधारियों की चौरासी लाख अथवा उससे न्यूनाधिक कितनी ही जातियाँ क्यों न हों, वस्तुतः उनका आरंभिक जन्म एक

ही रासायनिक तत्त्व से हुआ है। सृष्टि के आरभ में एक ही जीव रसायन था और वही अभी तक समस्त प्राणियों का संरचना का एकमात्र कारण है। परिस्थितियों ने लंबे समय की क्रमिक विकास शृंखला में बाँधकर उन्हें आगे बढ़ाया है। प्रगति की घुड़दौड़ में एक से अनेक बने हुए प्राणधारी अपनी दिशा और तीव्रता के सहारे विभिन्न स्तर के, विभिन्न आकृति-प्रकृतियों के बनते चले गये हैं।

सृष्टि के आरंभ होने से पूर्व ब्रह्म एक था। उसने एक से बहुत होने की इच्छा की, तदनुसार वह अपने आपको विभक्त कर बैठा और उन खंड-विखंडों ने अपनी विभिन्न प्रकार की आकृति-प्रकृति बना ली। तदनुसार यह विश्व अनेकानेक जड़-चेतन पदार्थों में बनता, बढ़ता और विकसित-परिष्कृत होता हुआ वर्तमान स्थिति तक आ पहुँचा।

जीवन विद्या का निष्कर्ष यह है कि विश्वव्यापी चेतना अविच्छिन्न है। प्रत्येक प्राणी में वही समुद्र की लहरों की तरह छोटे-बड़े वर्गों में विभाजित हुई दृष्टिगोचर हो रही है।

प्राणियों के बीच पाया जाने वाला साहचर्य, सहयोग, स्नेह और संवेदन एक तथ्य है, जिसे झुठलाया नहीं जा सकता। जड़ जगत् में प्रत्येक पदार्थ अन्यान्य पदार्थों का सहयोग लेकर एवं देकर ही अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं। यदि यह सहयोग सूत्र हट जाए तो प्रत्येक अणु-परमाणु अपने पृथक् अस्तित्व में बिखरा-बिखरा दिखाई पड़ेगा, फिर ऐसे किसी पदार्थ का आकार न बन सकेगा, जिसे वस्तु नाम दिया जा सके या इंद्रियों से देखा-पकड़ा जा सके। सृष्टि संतुलन विद्या—इकॉलाजी यह सिद्ध करती है कि जड़ समझी जाने वाली प्रकृति का प्रत्येक घटक सहयोग के आदान-प्रदान क्रम को अपनाये हुए है और उसी आधार पर उसका अस्तित्व एवं विकास क्रम चल रहा है।

चेतना के संबंध में भी यही बात है। जीवधारियों की चेतना में विकास, उल्लास एवं क्रियाकलाप न्यूनाधिक दिखाई पड़ता है। उसका कारण साहचर्य, स्नेह, सहयोग की न्यूनाधिकता ही है।

मनुष्य को इस सहकारिता की अधिक मात्रा उपलब्ध हुई। फलतः उसकी बुद्धि का विकासक्रम द्रुतगति से चला। इसी आधार पर उसने अन्य पदार्थों एवं पदार्थों का अधिक अच्छा उपयोग करना सीखा—खड़े होने, बोलने, लिखने एवं सोचने की क्षमता बढ़ाई—परिवार तथा समाज का ढाँचा खड़ा किया और क्रमिक गति से आगे बढ़ते हुए वर्तमान स्थिति तक आ पहुँचा।

जिस प्रकार जीव रसायन के एक ही मूल आधार में अनेकानेक प्राणियों का जन्म एवं विकास हुआ है, उसी प्रकार एक ही चेतना तत्त्व जिसे प्राण कहते हैं—समस्त प्राणधारियों की चिंतन शक्ति का, आत्मा का, मूलभूत आधार है। कपड़ा अनेक धागों से मिलकर बना होता है। चेतना के अनेक घटकों से मिला हुआ ही यह चेतन जगत् है। अलग-अलग प्राणी दिखाई पड़ते हुए भी वे एक ही महाप्राण के अविच्छिन्न अंग हैं। सभी घटों में एक ही सर्वव्याप्त आकाश पृथक्-पृथक् रूपों और सीमाओं में बँधा हुआ देखा जाता है। पृथक् आत्मा वस्तुतः एक ही व्यापक आत्मा की भिन्न दीखने वाली पर वस्तुतः अभिन्न इकाइयाँ हैं। दृश्यमान अनेकता अपने मूल में अविच्छिन्न एकता को धारण किये हुए हैं।

परब्रह्म साक्षी, द्रष्टा, अचिंत्य एवं अनिर्वचनीय है। उसकी अनुभूति ही हो सकती है, व्याख्या नहीं। शरीरी और अशरीरी स्थूल और सूक्ष्म कहे जाने वाले समस्त प्राणी उसी में से उत्पन्न होते हैं और अंततः उसी में लय हो जाते हैं। जड़ और चेतन सृष्टि का, परा और अपरा प्रकृति का सृजेता एवं अधिपति वही है। उसी ब्रह्म-महासागर की लहरें हम विविध आकार-प्रकारों में ज्ञान-विज्ञान के माध्यम से अनुभव करते हैं।

दिव्य योनियों के चार वर्ग पितर, मुक्त, देव और प्रजापति हमारी तरह पंच तत्त्वों का दृश्यमान शरीर धारण किए हुए नहीं है, अस्तु उन्हें हम चर्म-चक्षुओं से नहीं देख सकते तो भी उन्हें सूक्ष्म शरीरधारी ही कहा जाएगा। शब्द, रूप, रस, गंध, स्पर्श की तन्मात्राएँ उनके दिव्य शरीरों में विद्यमान रहती हैं, अतएव वे शरीरधारी

प्राणियों को एवं पंचतत्त्वों से बने हुए पदार्थों को प्रभावित कर सकते हैं। अपनी सीमा-मर्यादा के अनुरूप अपनी सामर्थ्य का वे उपयुक्त अवसर पर प्रयोग भी करते हैं और सृष्टि संतुलन बनाए रखने में भूमिका का निर्वाह भी करते हैं। प्रजापति वर्ग की वे दिव्यात्माएँ होती हैं, जो केवल पृथ्वी का नहीं, वरन् समस्त ब्रह्मांड का, उसमें अवस्थित पृथ्वी जैसे असंख्यों चेतन प्राणधारियों वाले पिंडों का और निर्जीव ग्रह-नक्षत्रों का संतुलन बनाते हैं। ब्रह्मांड में चल रही विविध क्रियाओं एवं उनकी प्रतिक्रियाओं की स्थापना और व्यवस्था उसी वर्ग की आत्माओं को संभालनी पड़ती है। उन्हें स्रष्टा, पोषक-संहारक स्तर के कार्य ब्रह्मा, विष्णु, महेश की भूमिका में संपन्न करने पड़ते हैं।

देव वे जिन्हें सृष्टि-संतुलन बनाए रहने का ईश्वर प्रदत्त विशिष्ट उत्तरदायित्व वहन करना पड़ता है। वे समय-समय पर विशेष प्रयोजनों के लिए, विशेष कलेवर धारण करके देवदूतों, महामानवों एवं अवतारी महापुरुषों के रूप में जन्म लेते हैं। समय की विकृतियों का निराकरण और अभीष्ट सत्प्रवृत्तियों का संवर्धन उनका प्रधान कार्य रहता है। धर्म की ग्लानि और अधर्म के अभ्युत्थान का समाधान, साधुता का परित्राण एवं दुष्कृतों का विनाश, इन अवतारी महामानवों का लक्ष्य रहता है। लोक-शिक्षण एवं नव-निर्माण के लिए उनके विविध क्रिया-कलाप होते हैं। सामयिक संतुलन ठीक हो जाने के उपरांत वे अशरीरी रहकर विश्व-कल्याण के प्रयोजनों में निरत रहते हैं।

पितर वे हैं जो पिछला शरीर त्याग चुके, किंतु अगला शरीर अभी प्राप्त नहीं कर सके। इस मध्यवर्ती स्थिति में रहते हुए वे अपना स्तर मनुष्यों जैसा ही अनुभव करते हैं।

वे साधारण पितरों से कई गुना शक्तिशाली होते हैं। जो लोभ-मोह के, राग-द्वेष के, वासना-तृष्णा के बंधन काट चुके, सेवा-सत्कर्मों की प्रचुरता से जिनके पाप-प्रायश्चित्य पूर्ण हो गये, उन्हें शरीर धारण करने की आवश्यकता नहीं रहती। उनका सूक्ष्म शरीर

अत्यंत प्रबल होता है। अपनी सहज सतोगुणी करुणा से प्रेरित होकर प्राणियों की सत्प्रवृत्तियों का परिपोषण करते हैं। सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्धन में योगदान देते हैं। श्रेष्ठ कर्मों की सरलता और सफलता में उनका प्रचुर सहयोग रहता है। वे श्रेष्ठ आत्माएँ मुक्त पुरुषों की होती हैं। उदार प्रवृत्ति वाले पितर भी अपनी सामर्थ्य के अनुसार मुक्त पुरुषों की ही गतिविधियों का अनुसरण करने का प्रयास करते रहते हैं।

मुक्त आत्माओं और पितरों के प्रति मनुष्यों को वैसा ही श्रद्धा-भाव दृढ़ रखना चाहिए, जैसा देवों-प्रजापतियों तथा परमात्म—सत्ता के प्रति लोगों का श्रद्धा-भाव होता है। मुक्तों, देवों-प्रजापतियों एवं ब्रह्म को तो मनुष्यों की किसी सहायता की आवश्यकता नहीं होती, किंतु पितरों को ऐसी आवश्यकता होती है। उन्हें ऐसी सहायता दी जा सके, इसीलिए मनीषी-पूर्वजों ने पितर-पूजन श्राद्ध-धर्म की परंपराएँ प्रचलित की थीं। उनकी सही विधि और उनमें सन्निहित प्रेरणा को जानकर पितरों को सच्ची भाव-श्रद्धांजलि अर्पित करने पर वे प्रसन्न पितर बदले में प्रकाश, प्रेरणा, शक्ति और सहयोग देते हैं। पितरों को स्थूल सहायता की नहीं, सूक्ष्म भावात्मक सहायता की ही आवश्यकता होती है, क्योंकि वे सूक्ष्म शरीर में ही अवस्थित होते हैं।

हमारे शास्त्रों में मनुष्यों के तीन शरीर माने गये हैं—(१) स्थूल, (२) सूक्ष्म और (३) कारण शरीर। स्थूल शरीर वह है, जो हमें दिखाई देता है। जो पार्थिव अणु संकुलन से बना है, जिसे स्पर्श कर अनुभव करते हैं।

दूसरा सूक्ष्म शरीर—हल्का एवं सूक्ष्म परमाणुओं से बना होता है। यह परमाणु-विज्ञान में माने गये परमाणुओं से भिन्न होते हैं, सजीव एवं चेतन होते हैं। इसे प्राण शरीर भी कहा जाता है। इस शरीर में भी वर्षा, शीत, उष्णता, सुख-दुःख का अनुभव उसी तरह होता है, जिस तरह स्थूल शरीर में, किंतु सूक्ष्म शरीर के पोषण के लिए अन्न की आवश्यकता नहीं होती। विचार और भाव उसका

पोषण करते हैं, इसलिये सूक्ष्म शरीर के आने-जाने में समय नहीं लगता। वह क्षण मात्र में न्यूयार्क, जर्मनी, इटली या स्विट्जरलैंड पहुँच सकता है। साधी हुई विचार-शक्ति (मनोयोग) से बंद अलमारियों की पुस्तकें तक पढ़ी जा सकती हैं। अन्यान्य चमत्कारपूर्ण जानकारियाँ हासिल की जा सकती हैं, सूक्ष्म शरीर की सत्ता और महत्ता पर कहीं अन्यत्र विस्तृत प्रकाश डाला जाएगा। अभी इतना ही जानना चाहिए कि सूक्ष्म शरीर सभी जड़-वस्तुओं के लिए भी पारदर्शक होता है। पितर आत्माओं का शरीर सूक्ष्म शरीर का बना होता है। इस शरीर के आस-पास हल्के रंग का प्रकाश भी चारों ओर फैला रहता है। जो आत्मा जितनी अधिक पवित्र होती है, उसका प्रकाश भी अधिक फैला और चमकदार होता है। महापुरुषों के मुख-मंडल पर प्रदर्शित तेजोवलय इसी पवित्रता और तेजस्विता का प्रतीक होता है।

हिंदू-दर्शन की मान्यता यह है कि जब जीवात्मा स्थूल शरीर छोड़ देता है, तभी मृत्यु हो जाती है। अंतःकरण चतुष्ट्य (मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार) तथा कारण शरीर सहित जीवात्मा सूक्ष्म शरीर में ही होता है। इसलिये उसका वह व्यक्तित्व वहीं बना रहता है। यथासमय यही सूक्ष्म शरीर पुनर्जन्म ग्रहण करता है। यह भी कहा जाता है कि स्वाधीनावस्था में सूक्ष्म शरीर ही अलग होकर लोक-लोकांतरों की अनुभूतियाँ ग्रहण करता है।

कुछ जीवात्माएँ महान् तेजस्वी, विकार रहित, निष्काम तथा इतनी संकल्पवान् होती हैं कि वे मृत्यु के उपरांत किन्हीं लोकों में जा सकती हैं। स्थूल शरीर भी धारण कर सकती हैं, अपने सगे-संबंधियों को अथवा करुणावश किन्हीं भी मनुष्यों को संदेश और प्रेरणाएँ भी दे सकती हैं। भगवान् कृष्ण ने शोक-ग्रस्त अर्जुन को अभिमन्यु के दर्शन कराये थे, तब अभिमन्यु ने अर्जुन से कहा था—"इस संसार में कौन किसका ? किसका पिता कौन पुत्र ? सब जीव-कर्मवश शरीर धारण करते और फिर अपने लोक को लौट जाते हैं ?"

जगद्गुरु शंकराचार्य ने अपने सूक्ष्म-शरीर से ही माहिष्मती के मृत राजा के शरीर में प्रवेश किया था और काम कला का ज्ञान प्राप्त किया था। संत एकनाथ के यहाँ श्राद्ध के दिन ब्राह्मणों ने भोजन करने से इनकार कर दिया, तब उन्होंने अपने पितरों का आह्वान कर उन्हें साक्षात् भोजन कराया। इस घटना से संत एकनाथ को चमत्कारी व्यक्ति सिद्ध कर दिया था। सूक्ष्म शरीर के चमत्कार और भी आश्चर्यजनक हैं। वह लोकांतरों में भी प्रसन्नतापूर्वक गमन कर सकता है।

यहाँ एक बात स्पष्ट कर देना आवश्यक होगा कि शरीर की बीज अवस्था बिल्कुल सूक्ष्म और अदृश्य है, उसे प्रकाशस्वरूप भी कह सकते हैं, उसकी ऊर्ध्वगति या अधोगति अच्छे और बुरे भावों, विचारों, संकल्पों एवं क्रियाकलापों से होती है। इसलिये जीव के अन्यान्य ग्रहों में आवागमन का कारण भी सूक्ष्म रूप में विचार और भावनाएँ तथा स्थूल रूप में क्रियाकलाप, रहन-सहन और खान-पान होता है अर्थात् स्वर्ग और नर्क की प्राप्ति या उनसे छूटना एक ओर स्थूल शरीर की शुद्धि पर भी आश्रित है और सूक्ष्म शरीर की शुद्धता पर भी।

यहाँ तक दो बातें निर्विवाद सत्य सिद्ध होती हैं—(१) पारलौकिक जीवन, (२) आवागमन की स्थिति में सुख और दुःख की अनुभूति। तब फिर हमें उपनिषदों की इस मान्यता की ओर लौटना ही पड़ता।

"न ह्यन्ततरतो रूपं किंचन सिध्येत्। नो एतन्नाना। तद्यथा रथस्यारेष नेमिरर्पिता नाभावरा अर्पिता एवमेवैता भूत मात्राः प्रज्ञामात्रास्वर्पिता प्रज्ञामात्रा प्राणे अर्पिताः। एव लोकपाल एष लोकधिपतिरेष सर्वेश्वरः स म आत्मेति विद्यात् स म आत्मेति विद्यात्।" —कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् ६

अर्थात्—प्रज्ञामात्रा और भूतमात्रा के स्वरूप में कोई विभिन्नता नहीं है। जैसे रथ की नेमि अरों में और अरे रथ-नाभि के आश्रित रहते हैं, वैसे ही भूत मात्राएँ, प्रज्ञामात्राओं में और प्रज्ञामात्राएँ प्राण

में स्थित हैं। यह प्राण ही अजर-अमर, सुखमय और प्रज्ञामात्रा है। यद्यपि वह श्रेष्ठ कर्मों से न तो बढ़ता और न बुरे कर्मों से घटता है, किंतु जो शुभ कर्म करते हैं, प्रज्ञा और प्राण रूप परमेश्वर उन्हें ऊपर के लोकों (स्वर्ग) में पहुँचाता है तथा जो बुरे कर्म करते हैं, उन्हें नीचे के लोकों (नर्क) में धकेल देता है।

पितर-लोक ऊपर का ही लोक माना जाता है। यहाँ अवस्थित आत्माओं में सात्त्विकता का प्राधान्य होता है। उसी सत्व-गुण का प्रकाश वे अपने संपर्क में आए सत्पात्रों को देते हैं। साथ ही, पितर मुक्त नहीं होते। अपनी उन्नति में सहयोग की उन्हें भी अपेक्षा होती है। सद्भावनाएँ संप्रेषित करने पर उन्हें ऐसा ही भावात्मक सहयोग प्राप्त होता है। प्रकाशपूर्ण मार्गदर्शन का सत्कर्म करने पर पितर भी सद्गति के अधिकाधिक अधिकारी बनते हैं। इसलिए उन्हें ऐसे सत्कर्म में सहयोग देना भी उनकी प्रगति में सहयोग देना ही है। ऐसा सहयोग पितरों से संपर्क कर, उनके प्रति कोमल भावनाएँ पालकर तथा उनके सूक्ष्म संकेतों को समझकर सन्मार्ग पर बढ़ते हुए सहज ही प्रदान किया जा सकता है। पितर-पूजन, श्रद्धा-तर्पण का यही अर्थ एवं महत्त्व है।

☆ सर्वपितृ अमावस्या

पितृ-पक्ष का हिंदू-धर्म और हिंदू-संस्कृति में बड़ा महत्त्व है। जो पितरों के नाम पर श्राद्ध और पिंडदान नहीं करता, वह सनातन धर्मी हिंदू माना नहीं जा सकता। हिंदू-शास्त्रों के अनुसार मृत्यु होने पर मनुष्य का जीवात्मा चंद्रलोक की तरफ जाता है और ऊँचा उठकर पितृ-लोक में पहुँचता है। इन मृतात्माओं को अपने नियत स्थान तक पहुँचने की शक्ति प्रदान करने के लिए पिंडदान और श्राद्ध का विधान किया गया है। श्राद्ध पितरों के नाम पर ब्राह्मण-भोजन भी कराया जाता है। इसके पुण्य-फल से भी पितरों का संतुष्ट होना माना गया है। धर्म-शास्त्रों में यह भी कहा है कि जो मनुष्य श्राद्ध करता है, वह पितरों के आशीर्वाद से आयु, पुत्र,

यश, बल, वैभव, सुख और धन-धान्य को प्राप्त होता है। इसीलिये धर्म-प्राण हिंदू आश्विन मास के कृष्ण पक्ष भर प्रतिदिन नियमपूर्वक स्नान करके पितरों का तर्पण करते हैं। जो दिन उनके पिता की मृत्यु का होता है, उस दिन अपनी शक्ति के अनुसार दान करके ब्राह्मण-भोजन कराते हैं।

एक समय इस देश में श्राद्ध-कर्म का इतना प्रचार था कि उसके ध्यान में लोग अपने तन-बदन की सुधि भूल जाते थे। उन्हें बाल बनवाने, तेल लगाने, पान खाने आदि का भी अवकाश न मिलता था। उसी बात के चिह्न स्वरूप आज प्रायः सभी हिंदू, चाहे वे श्राद्ध करने वाले न भी हों, इन कार्यों से पृथक् रहना धर्मानुकूल मानते हैं। वैसे जिन लोगों के पिता स्वर्गवासी हो गये हैं, वे अमावस्या तक और जिनकी माता स्वर्गवासी हो गई हैं, वे मातृ-नवमी तक न तो बाल बनवाते हैं और न तेल लगाते हैं।

पितरों का पिंडदान करने का सबसे बड़ा स्थान गया माना जाता है और जनता में ऐसी मान्यता है कि गया में पितरों को पिंडदान कर देने पर फिर प्रति वर्ष पिंड देने की आवश्यकता नहीं रहती। यह भी कहते हैं कि महाराज रामचंद्र जी ने गया आकर फल्गू नदी के किनारे अपने मृत पिता महाराज दशरथ का पिंडदान किया था। कुछ भी हो इस प्रथा से इतना प्रत्यक्ष जान पड़ता है कि हिंदुओं की सभ्यता प्राचीन काल में काफी ऊँचे दर्जे तक पहुँच चुकी थी और वे जीवित माता-पिता की सेवा करना ही अपना परम धर्म नहीं मानते थे, वरन् उनके मरने पर भी उनकी स्मृति-रक्षा करना अपना पवित्र कर्तव्य समझते थे और इसके लिए १५ दिन का समय अलग कर दिया था। हिंदुओं की इस प्रथा की प्रशंसा अन्य लोगों ने भी की हैं। हिंदुस्तान के मुगल सम्राट् शाहजहाँ ने, जब उसे उसके लड़के औरंगजेब ने कैद कर दिया था, को लिखा था कि "तुम से तो हिंदू लोग ही बहुत अच्छे हैं, जो मरने के बाद भी अपने पिता को जल और भोजन देते हैं। तू तो अपने जीवित पिता को भी दाना-पानी के बिना तरसा रहा है।"

इस विषय पर विशेष विचार करने से यही प्रतीत होता है कि पितृ-पक्ष का महत्त्व इस बात में नहीं है कि हम श्राद्ध-कर्म को कितनी धूम-धाम से मनाते हैं और कितने अधिक ब्राह्मणों को भोजन कराते हैं, वरन् उसका वास्तविक महत्त्व यह है कि हम अपने पितामह आदि गुरुजनों की जीवितावस्था में ही कितनी सेवा-सुश्रूषा, आज्ञापालन करते हैं ? चाहे अन्य लोग इसका कुछ भी अर्थ क्यों न लगाएँ, पर हम तो यही कहेंगे कि जो व्यक्ति अपने जीवित पिता-माता आदि की सेवा नहीं करते, उल्टा उनको दुःख पहुँचाते हैं या उनका अपमान करते हैं, बाद में उनका पिंडदान और श्राद्ध करना कोरा ढोंग है और उसका कोई परिणाम नहीं; क्योंकि अगर हमारे श्राद्ध का फल पितरों तक सूक्ष्म रूप से पहुँचता भी है तो वह तभी संभव है, जब हम सच्ची भावना और एकाग्र चित्त से उस कार्य को करें। पर जो लोग जन्म भर अपने माता-पिता को हर तरह से कष्ट पहुँचाते रहे, उनको भला-बुरा कहते रहे, वे फिर किस प्रकार श्रद्धा और हार्दिक भावना से श्राद्ध आदि कर्म कर सकते हैं ?

माता-पिता एवं गुरुजनों के प्रति कृतज्ञता की भावना जीवन भर धारण किये रहना आवश्यक है। यदि इन गुरुजनों का स्वर्गवास हो जाए तो भी मनुष्य की वह श्रद्धा स्थिर रहनी चाहिए। इस दृष्टि से मृत्यु के पश्चात् पितृ यज्ञों में मृत्यु की वर्ष तिथि के दिन, पर्व समारोहों पर श्राद्ध करने का श्रुति-स्मृतियों में विधान पाया जाता है।

श्रद्धा से श्राद्ध शब्द बना है। श्रद्धापूर्वक किये कार्य को श्राद्ध कहते हैं। श्राद्ध से श्रद्धा जीवित रहती है। श्रद्धा को प्रकट करने का जो प्रदर्शन होता है, वह श्राद्ध कहलाता है। जीवित पितरों और गुरुजनों के लिए श्रद्धा प्रकट करने—श्राद्ध करने के लिए, उनकी अनेक प्रकार से सेवा-पूजा तथा संतुष्टि की जा सकती है; परंतु स्वर्गीय पितरों के लिए श्रद्धा प्रकट करने का, अपनी कृतज्ञता को प्रकट करने का कोई निमित्त बनाना पड़ता है। यह निमित्त

है—श्राद्ध। मृत पितरों के लिए कृतज्ञता के इन भावों का स्थिर रहना, हमारी संस्कृति की महानता को ही प्रकट करता है। जिनके सेवा-सत्कार के लिए हिंदुओं ने वर्ष में १५ दिन का समय पृथक् निकाल लिया है। पितृ भक्ति का इससे उज्ज्वल आदेश और कहीं मिलना कठिन है।

श्रद्धा तो हिंदू धर्म का मेरुदंड है। हिंदू धर्म के कर्मकांडों में आधे से अधिक श्राद्धतत्त्व भरा हुआ है। सूर्य, चंद्रमा, ग्रह, नक्षत्र, पृथ्वी, अग्नि, जल, कुँआ, तालाब, नदी, मरघट, खेत, खलिहान, भोजन, चक्की, चूल्हा, तलवार, कलम, जेवर, रुपया, घड़ा, पुस्तक, आदि निर्जीव पदार्थों की विवाह या अन्य संस्कारों में अथवा किन्हीं विशेष अवसरों पर पूजा होती है। यहाँ तक कि नाली या घूरे तक की पूजा होती है। तुलसी, पीपल, वट, आँवला आदि पेड़, पौधे तथा गौ, बैल, घोड़ा, हाथी आदि पशु पूजे जाते हैं। इन पूजाओं में उन जड़-पदार्थों या पशुओं को कोई लाभ नहीं होता, परंतु पूजा करने वाले के मन में श्रद्धा एवं कृतज्ञता का भाव अवश्य उत्पन्न होता है। जिन जड़-चेतन पदार्थों से हमें लाभ मिलता है, उनके प्रति हमारी बुद्धि में उपकृत भाव होना चाहिए और उसे किसी न किसी रूप में प्रकट करना ही चाहिए। यह श्राद्ध ही तो है।

मरे हुए व्यक्तियों का श्राद्ध कर्म से कुछ लाभ है कि नहीं ? इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि होता है, अवश्य होता है। संसार एक समुद्र के समान है, जिसमें जल कणों की भाँति हर एक जीव है। विश्व एक शिला है तो व्यक्ति एक परमाणु। जीवित या मृत आत्मा इस विश्व में मौजूद है और उसका अन्य समस्त आत्माओं से संबंध है। संसार में कहीं भी अनीति, युद्ध, कष्ट, अनाचार अत्याचार हो रहे हों तो सुदूर देशों के निवासियों के मन में भी उद्वेग उत्पन्न होता है। जाड़े और गर्मी के मौसम में हर एक वस्तु ठंडी और गर्म हो जाती है। छोटा-सा यज्ञ करने पर भी उसकी दिव्यगंध व भावना समस्त संसार के प्राणियों को लाभ पहुँचाती है। इसी प्रकार कृतज्ञता की भावना प्रकट करने के लिए

किया हुआ श्राद्ध समस्त प्राणियों में शांतिमयी सद्भावना की लहरें पहुँचाता है। यह सूक्ष्म भाव-तरंगें तृप्तिकारक और आनंददायक होती हैं। सद्भावना की तरंगें जीवित-मृत सभी को तृप्त करती हैं; परंतु अधिकांश भाग उन्हीं को पहुँचता है, जिनके लिए वह श्राद्ध विशेष प्रकार से किया गया है।

स्थूल वस्तुएँ एक स्थान से दूसरे स्थान तक देर में कठिनाई से पहुँचती हैं; परंतु सूक्ष्म तत्त्वों के संबंध में यह बात नहीं है। उनका आवागमन आसानी से हो जाता है। हवा, गर्मी, प्रकाश और शब्द आदि को बहुत दूरी पार करते हुए कुछ विलंब नहीं लगता। विचार और भाव इससे भी सूक्ष्म हैं। वह उस व्यक्ति के पास जा पहुँचते हैं, जिसके लिए वह फेंके जाएँ। तर्पण का कर्मकांड प्रत्यक्ष रूप से बुद्धिवादी व्यक्तियों के लिए कोई महत्त्व न रखता हो, परंतु उसकी महत्ता तो उसके पीछे काम कर रही भावना में है। भावना ही मनुष्य को असुर, पिशाच, राक्षस, शैतान या महापुरुष, ऋषि, देवता महात्मा बनाती है। इसी के द्वारा मनुष्य सुखी, स्वस्थ, पराक्रमी, यशस्वी तथा महान् बनते हैं और यही उन्हें दुःखी, रोगी, दीन, दास और तुच्छ बनाती हैं। मनुष्य और मनुष्य क बीच में जो जमीन-आसमान का अंतर दिखाई देता है, वह भावना का ही अंतर है। यही कारण है कि हमारे पूर्वजों ने अपने धार्मिक कर्मकांडों का माध्यम इसी महान् शक्ति को बनाया है।

उपरोक्त कारणों के फलस्वरूप हिंदू अपने पितरों के प्रति श्रद्धा, कृतज्ञता प्रकट करने और उनके प्रति अपनी भावनाओं को उत्तेजित करने के लिए वर्ष में पंद्रह दिन का समय देते हैं। श्राद्ध को केवल रूढ़िमात्र से पूरा न कर लेना चाहिए वरन् पितरों के द्वारा जो हमारे ऊपर उपकार हुए हैं, उनका स्मरण करके, उनके प्रति अपनी श्रद्धा और भावना की वृद्धि करनी चाहिए। साथ-साथ अपने जीवित पितरों को भी न भूलना चाहिए। उनके प्रति भी आदर, सत्कार और सम्मान के पवित्र भाव रखने चाहिए।

श्राद्ध में ब्राह्मणों को अन्न, वस्त्र, पात्र आदि का दान दिया जाता है। इसमें ध्यान देने योग्य बात यह है कि जिस व्यक्ति विशेष को आप जो वस्तुएँ दान रूप में दे रहे हैं, वह शीघ्र ही उनके काम आने वाली हों, उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली हों। ऐसा न हो कि आप रुपया खर्च करके दान दें और वह वस्तुएँ उनके घर पर लंबे समय तक बिना काम के पड़ी रहें।

यह बात युक्तिसंगत नहीं दीखती कि यदि किसी वृद्ध या वृद्धा की मृत्यु हो तो वृद्ध या वृद्धाओं को ही भोजन कराया जाए या दान दिया जाए या विधवा के स्वर्गवास होने पर विधवाओं को ही दान दिया जाए। आवश्यकता को देखकर ही दान की महत्ता और लाभ सिद्ध होता है। भोजन कराते समय निर्धन विद्यार्थियों को फीस आदि के लिए भी स्थान रखना चाहिए। पितरों के लिए दिये गये दान द्वारा उनके जीवन का उत्थान होगा तो उनकी अंतरात्मा से आपके पितरों के प्रति शांतिदायक सद्प्रेरणाएँ निकलेंगी। इसी प्रकार से सत्कार्यों में योग देने के लिए दान के अन्य उपाय सोचे जा सकते हैं।

तर्पण तो श्राद्ध में किया ही जाता है। इसके साथ-साथ पितरों की शांति के लिए "सूक्त संहिता" नामक पुस्तक में वर्णन पितृ सूक्त के मंत्रों से हवन करना चाहिए, क्योंकि हिंदू धर्म में कोई भी शुभ या अशुभ कार्य हवन के बिना पूर्ण नहीं माना जाता।

पितरों को सच्ची श्रद्धा दी जायेगी, उन्हें तृप्त रखा जायेगा, तो वे निश्चय ही शक्ति, प्रकाश, मार्गदर्शन, प्रेरणा, सहयोग एवं भावात्मक अनुदान देंगे।

❑❑

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा